ओ३म्

पाक्षिक परोपकारी

ऋग्वेद
यजुर्वेद
सामवेद
अथर्ववेद

वर्ष - ५७ अंक - ३ महर्षि दयानन्द की स्थानापन्न परोपकारिणी सभा का मुखपत्र फरवरी (प्रथम) २०१५

महर्षि दयानन्द सरस्वती

ऋषि मेले के अवसर पर आर्यजनों को सम्बोधित करते हुए
सिरोही नरेश महाराजा रघुवीर सिंह

महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा का मुख पत्र

वर्ष : ५७ **अंक** : ३
दयानन्दाब्द: १९०
विक्रम संवत्: माघ शुक्ल, २०७१
कलि संवत्: ५११५
सृष्टि संवत्: १,९६,०८,५३,११५

सम्पादक
प्रो. धर्मवीर

प्रकाशक-परोपकारिणी सभा,
केसरगंज, अजमेर- ३०५००१
दूरभाष: ०१४५-२४६०१६४

मुद्रक-श्री मोहनलाल तँवर
वैदिक यन्त्रालय, अजमेर।
दूरभाष : ०१४५-२४६०८३१

-परोपकारी का शुल्क-
भारत में
वार्षिक-२०० रु., **द्विवार्षिक**-३९० रु., **त्रिवार्षिक**-५८० रु., **आजीवन**-(=१५ वर्ष)-२००० रु.।

विदेश में
वार्षिक-५० यू.के. पाउण्ड/८० यू.एस. डालर, **द्विवार्षिक**-९५ पा./१५२ डा., **त्रिवार्षिक**-१४० पा./२२५ डा., **आजीवन**-(=१५ वर्ष)-५०० पा./८०० डा.।

वैदिक पुस्तकालय : ०१४५-२४६०१२०
ऋषि उद्यान : ०१४५-२६२१२७०

लेख में प्रकट किए विचारों के लिए सम्पादक उत्तरदायी नहीं है। किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्यायक्षेत्र अजमेर ही होगा।

ओ३म्

विद्याविलासमनसो धृतशीलशिक्षा:,
सत्यव्रता रहितमानमलापहारा:।
संसारदु:खदलनेन सुभूषिता ये,
धन्या नरा विहितकर्म परोपकारा:।।

RNI. No. ३९५९ / ५९

परोपकारी

फरवरी प्रथम २०१५

अनुक्रम

१. घर से जाने व घर वापसी की कथा	सम्पादकीय	०४
२. अविद्या क्षेत्रमुत्तरेषां प्रसुप्ततनु.....	स्वामी विष्वङ्	०७
३. कुछ तड़प-कुछ झड़प	राजेन्द्र जिज्ञासु	१४
४. युग प्रवर्तक- महर्षि दयानन्द	सत्येन्द्र सिंह आर्य	१८
५. वैदिक पुस्तकालय के प्रकाशन		२४
६. ऊमर काव्य	ऊमरदान लालस	२६
७. पुस्तक-समीक्षा	देवमुनि	३१
८. जिज्ञासा समाधान-८०	आचार्य सोमदेव	३२
९. स्तुता मया वरदा वेदमाता-३		३८
१०. संस्था-समाचार		३९
११. आर्यजगत् के समाचार		४२

www.paropkarinisabha.com
email : psabhaa@gmail.com

- उपनिषद्, दर्शन, प्रवचन आदि सुनने हेतु बटन दबाएं -
www.paropkarinisabha.com → Daily Pravachan

सम्पादकीय

घर से जाने व घर वापसी की कथा

मुझे मेरे हिन्दू होने में कोई सन्देह नहीं परन्तु यह भी सच है कि जब मैं हिन्दू होता हूँ तब मूर्ति पूजा, अवतारवाद, जन्मना जाति, छुआछूत, जन्म के आधार पर ऊँचनीच, जन्मपत्री, फलित ज्योतिष, तीर्थों से पुण्य, चमत्कार, बलि प्रथा, भाग्यवाद, परमेश्वर द्वारा पाप क्षमा करना, तन्त्र-मन्त्र, कर्मकाण्ड, रूढ़िवाद, अन्धविश्वास में जीवन की सफलता स्वीकार करना मेरी नीयति बन जाती है।

मेरे हिन्दू होने का ही परिणाम है मैंने जन्मना जाति को स्वीकार करके अपने को ऊँचा दूसरे को नीचा, अछूत समझा, अस्पृश्य को घृणित मानकर उसे अपने से दूर करने में मुझे हजारों साल तक गौरव अनुभव हुआ है। यही कारण इस देश में धर्मान्तरण का प्रमुख आधार रहा है। गत दो हजार वर्षों में हिन्दू समाज में विघटन हुआ है। जैसे-जैसे शिक्षा और राजनीति में प्रगति हुई, मनुष्य अपने स्वार्थों को समझने और उन्हें सिद्ध करने में लग गया, यह कार्य अंग्रेजों ने चतुराई से किया और इस्लाम ने कट्टरता से किया। आज भारत में इस्लाम-ईसाइयत पर जो अंकुश लगा है वह ऋषि दयानन्द और आर्यसमाज की देन है। इसमें सफलता नहीं मिलने का कारण आर्यसमाज का अधूरापन है। जो हृदय-मस्तिष्क दोनों से अपनी मूर्खता पर गर्व करते हैं उसे हिन्दू कहते हैं। जो मस्तिष्क से तो सत्य को समझते हैं परन्तु व्यवहार में अपनी पुरानी मूर्खताओं को हृदय से चिपकाये रहते हैं, ऐसे लोग अपने को आर्यसमाजी कहते हैं।

यदि हम संक्षेप में कहें तो ऋषि दयानन्द ने छोटा-सा काम अपने जीवन में किया है, वह एक छोटा सा काम है यह देश आज से सौ वर्ष पहले ही ईसाई, मुसलमान हो चुका होता, ऋषि दयानन्द और आर्यसमाज के प्रयत्न से इस देश में धर्मान्तरण पर आंशिक रोक लगी। इस आन्दोलन में सबसे बड़ी बात हुई ईसाई, मुसलमानों द्वारा किये जा रहे धर्मान्तरण पर समाज में चर्चा होने लगी। स्वतन्त्रता के समय तक हिन्दू समाज में ऐसे लोगों की कमी नहीं थी जो ऋषि दयानन्द के कार्य को हिन्दू विचारधारा का विरोधी मानते थे। आज भी इस समाज में ऐसे मूर्ख विद्वान् हैं जो ईसाई और मुसलमानों द्वारा हिन्दूओं का धर्मान्तरण किये जाने को विचारों की स्वतन्त्रता बताते हैं और हिन्दुओं द्वारा ईसाई या मुसलमान बने लोगों को हिन्दू धर्म में लाना साम्प्रदायिकता मानते हैं। जब संसद में धर्मान्तरण पर शोर मचाया जा रहा था तब सरकार ने इस विषय में कानून बनाने का प्रस्ताव किया तो विपक्ष पीछे हट गया। विपक्ष हिन्दुओं के शुद्धि कार्यक्रम को रोकना चाहता है और ईसाई-मुसलमानों को धर्म की स्वतन्त्रता के नाम पर धर्मान्तरण की छूट देने को सही मानता है। कांग्रेस में गाँधी जी ने भी यही अन्याय हिन्दुओं के साथ किया था और मुसलमानों का पक्ष लिया था।

ऋषि दयानन्द ने देश पर आने वाले संकट को समझ लिया था और उन्होंने शुद्धि आन्दोलन का प्रारम्भ किया था। आर्यसमाज के शुद्धि आन्दोलनों के महत्त्व को समझते हुए राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ ने इस कार्य को परावर्तन के नाम से प्रारम्भ किया। इस कार्य को अधिक सरल और विवाद को कम करने के विचार से इस को घर वापसी नाम दे दिया। आज उतनी घर वापसी हो नहीं रही, जितना इसका शोर किया जा रहा है। सरकार संघ के लोगों की होने और संघ संस्थाओं द्वारा घर वापसी का कार्य करने की बात कहने के कारण तथाकथित धार्मिक स्वतन्त्रता के पक्षधरों को कोलाहल करने का अवसर मिल गया है। इस शोर में धर्मान्तरण की घटना से अधिक इस रास्ते से आने वाला भय कारण है।

घर वापसी और घर से भगाना दोनों ही बातें ईमानदारी से परे हैं। घर से जाने का कारण ज्ञात है और यदि वह कारण समाप्त कर लिया गया है तो घर वापसी की बात समझ में आती है, यदि घर से जाने का कारण विद्यमान है तो घर वापसी का कोई अर्थ नहीं रहता। हिन्दुओं के धर्मान्तरित होने के तीन मुख्य कारण रहे हैं-

एक स्वतन्त्रता से पहले और बाद में, जहाँ मुस्लिम वर्चस्व रहा है वहाँ पर बलपूर्वक, हिंसा द्वारा, तलवार के जोर से हिन्दुओं को मुसलमान बनाया गया और आज भी बनाया जा रहा है।

दूसरा स्वतन्त्रता के बाद देश में प्रलोभन देकर, झूठे प्रचार, चमत्कार दिखाकर बड़ी संख्या में हिन्दुओं को धर्मान्तरित किया गया, आज भी धर्मान्तरित किया जा रहा है।

तीसरा इन दोनों परिस्थितियों में जहाँ धर्मान्तरण करने वाले दोषी है, वहाँ हिन्दुओं के द्वारा जन्म से जातिपाति

मानना, ऊँचनीच, अस्पृश्यता आदि के लिये हिन्दू समाज उत्तरदायी है। घर वापसी का विरोध करने वालों को घर वापसी की कमियों का ही पता नहीं है या वे केवल हिन्दू विरोधी होने का गौरव प्राप्त करना चाहते हैं। जहाँ बलपूर्वक हिंसा या भय से धर्म परिवर्तन हुआ है, वहाँ घर वापसी की बात ठीक लगती है। परन्तु जहाँ धर्मान्तरण में हिन्दू समाज की विचारधारा उत्तरदायी है, वहाँ घर वापसी के लिए हिन्दू समाज को स्वयं में सुधार लाना होगा, वास्तविकता तो यह है कि हिन्दू जिस हिन्दुत्व पर गर्व करता है वही उसके विनाश का कारण है, आज भी हिन्दू की पहचान उसकी किसी सामाजिक समानता से नहीं होती, हिन्दू की यदि पहचान है तो उसकी जाति से है फिर किसी ईसाई या मुसलमान की घर वापसी करेंगे तो ब्राह्मण को तो ब्राह्मण बनायेंगे और ठाकुर या जाट रहा तो उसे ठाकुर या जाट बना देंगे, यदि वह दलित रहा तो उसे घर वापसी में दलित ही बनाना पड़ेगा। यदि घर वापसी पर उसे दलित ही बनना पड़ा तो इस खण्डहर में उसे लौटने में लौटने वाले का क्या आकर्षण होगा। ईसाई या मुसलमान बने व्यक्ति को उसका धर्म में, जन्मगत ऊँच-नीच, छूआछूत का अपमान नहीं ढ़ोना पड़ता।

जो लोग हिन्दुत्व को जीवन पद्धति या वे ऑफ लाइफ कहते हैं, वे भी ले उड़ने वाले हैं। न्यायालय ने कह दिया होगा परन्तु यदि हिन्दू जीवन पद्धति है तो यह तो बताना होगा वह कौनसी जीवन पद्धति है जिसे आप हिन्दुत्व के नाते स्वीकार करना चाहते हैं। हिन्दू समाज में या तो कोई जीवन पद्धति है ही नहीं और यदि कहें कि जीवन पद्धति है तो फिर एक नहीं है वहाँ सैंकड़ों तरह की जीवन पद्धतियाँ हैं, क्या सभी जीवन पद्धतियों का नाम हिन्दुत्व है? यदि हम ऐसा स्वीकार कर लें तो ये पद्धतियाँ परस्पर विरोधी होने से एक दूसरे को गलत सिद्ध करती हैं। ऐसी परिस्थिति में हिन्दुत्व में कुछ भी ऐसा नहीं होगा जिसे आप ठीक या गलत कह सकते हैं।

इस मुसीबत से बचने के लिए इस हिन्दुत्व की वकालत करने वालों ने एक नारा गढ़ लिया है जो सुनने में तो अच्छा लगता है परन्तु नितान्त निरर्थक है। नारा है- अनेकता में एकता, हिन्दू की विशेषता। यह कथन दर्शन की कसौटी पर कभी खरा नहीं उतर सकता, जब विचार के स्तर पर ही इसका अस्तित्व नहीं है तो व्यवहार के स्तर पर उसका होना कैसे सम्भव है। अनेकता भिन्नता का आधार है, समानता एकता का। जैसे कही स्त्री, पुरुष, बच्चे, बड़े-बूढ़े बैठे हैं, वे सब मनुष्य हैं इसलिए एक हैं न कि स्त्री, पुरुष होने से, स्त्री-पुरुष दोनों तो इनकी भिन्नता का प्रतिपादक है। जबतक समानता नहीं होगी एकत्व सम्भव ही नहीं है। फिर अनेकता में एकता कैसे हो सकी है? यह एक मूर्ख बनाने वाला नारा है।

आप जिस हिन्दू समाज को देखते हैं वह जातियों, उपजातियों, वर्गों में बंटा है, उसमें कुछ भी समानता नहीं बची है जो उसे एक बना सके। उसके एकत्व का एक ही आधार है ये सब पहले वैदिक धर्मी थे, एक ईश्वर में विश्वास करते थे अतः एक थे उसी आधार पर फिर भी एक हो सकते हैं, यही इनमें समानता है जो इन्हें एक सिद्ध करती है।

आज शुद्धि के प्रयास सफल नहीं हुए इस का प्रमुख कारण यही रहा है कि हमने समस्या से तो लड़ने की सोची परन्तु समाधान करने में हमारा उत्साह नहीं रहा। एक बार लखनऊ में १९६७ में एक तीन दिन का शिविर लगा था। उसमें गुरु जी भी थे, संघ के बौद्धिक प्रमुख बाबा आप्टे थे, रात्रि के समय शंका समाधान का प्रसंग चल रहा था। संघ के लोग मुसलमानों को हिन्दू बनाने की बात करने लगे थे। उस सत्र में एक प्रश्न उठा था यदि मुसलमानों को आप हिन्दू बनाने के इच्छुक है तो क्या उनको हिन्दू समाज उनके अधिकार देने को तैयार है। बाबा जी ने कहा- बात को स्पष्ट करें, अधिकार से क्या अभिप्राय है? उन्हें बताया गया समाज में अधिकार समानता का होता है। सामाजिक समानता रोटी और बेटी से आती है जो लोग परस्पर एक-दूसरे के यहाँ भोजन करते हैं और परस्पर विवाह सम्बन्धों को मान्यता देते हैं तो इन लोगों को उस समाज का अंग समझा जाता है। उस समय आप्टे जी का उत्तर निराशाजनक और हिन्दूवादी था उन्होंने कहाँ मुसलमान लोग विवाह सम्बन्ध परस्पर ही कर लेंगे। उनसे कहा गया मुसलमानों को हिन्दू बनने की इच्छा नहीं हिन्दू उन्हें अपनाना चाहता है तो उसे ही अपने द्वार खोलने पड़ेंगे।

इसके विपरीत आर्यसमाज ने जहाँ शुद्धि का ईमानदारी से प्रयास किया वहाँ सफलता भी मिली। आर्यसमाज और स्वामी दयानन्द के शुद्धि की चर्चा करते हुए इन हिन्दुवादियों का गला सूखता है परन्तु उदाहरण हमारे सामने है जहाँ आर्यसमाज के प्रयास सार्थक हुए हैं। उत्तर भारत में जो जाट मुसलमान हो गये उन्हें मूले जाट कहा जाता है तथा जो राजपूत मुसलमान हुए उन्हें रांघड़ राजपूत कहते हैं। उत्तर प्रदेश में एक गाँव है जिवाना गुलियान, इस गाँव में

मूले जाट रहते थे, आर्यसमाज ने सम्मेलन करके उन्हें शुद्ध कर हिन्दू समाज में मिलाने का प्रयास किया। उस समय सबसे बड़ी बाधा यही सामने आई, मुसलमानों ने कहा हम हिन्दू तो बन जायेंगे परन्तु हमें कौन हिन्दू है जो अपनी लड़की देगा? उस समय आर्य नेता बूढ़पुर के निवासी श्री लज्जाराम के सुपुत्र पूर्णचन्द जी जो बाद में स्वामी पूर्णानन्द के नाम से प्रसिद्ध हुए उन्होंने सभा में खड़े होकर घोषणा की सबसे पहले वे अपनी लड़की का विवाह मुस्लिम लड़के से करने को तैयार हैं, बस फिर क्या था? सारा गाँव हिन्दू हो गया, आज सारा गाँव हिन्दू है। इन्हीं परिवारों के सदस्य श्री सत्येन्द्र सोलंकी उत्तर प्रदेश विधानसभा के सदस्य भी रहे हैं। **यही उपाय है धर्मान्तरण रोकने का और घर वापसी को सफल बनाने का।**

स्वामी श्रद्धानन्द जी ने शुद्धि का सबसे बड़ा आन्दोलन चलाया, उन्होंने शुद्धि सम्मेलन कर बड़े-बड़े हिन्दू नेताओं की उपस्थिति में अस्सी हजार मूले जाटों की शुद्धि की थी। इस शुद्धि की शिकायत १९२३-२४ में आगरा में हुए कांग्रेस अधिवेशन में मौलाना अली बन्धुओं ने उस समय के अधिवेशन अध्यक्ष मोतीलाल नेहरू से की थी, तब मोतीलाल नेहरू ने अली बन्धुओं को उत्तर दिया- अली भाई ये आर्यसमाजी कब से शुद्धि का कार्य कर रहे हैं? तब स्वामी दयानन्द का स्वर्गवास हुए चालीस साल हो गये थे। अलीभाई ने कहा लगभग चालीस वर्ष से तब मोतीलाल नेहरू ने अलीबन्धु से कहा- मौलना जमीन का मोरुसी (स्वामित्व) बारह साल में हो जाती है इसलिए तुम्हारी शिकायत का कोई मूल्य नहीं है, अली बन्धुओं ने यह शिकायत गाँधी जी से भी की थी। गाँधी जी ने स्वामी श्रद्धानन्द जी को बुलाकर उन्हें कहा- आप शुद्धि का काम छोड़ दें। इससे मुसलमान भाइयों को दु:ख होता है तब स्वामी जी ने उत्तर दिया- यदि मुसलमान तबलीग का छोड़ दें तो मैं भी शुद्धि के काम बन्द कर दूँगा। तब अलिबन्धुओं ने कहा हमारे लिए यह धार्मिक आदेश है, अत: इस धर्मान्तरण के कार्य को हम बन्द नहीं कर सकते। तब श्रद्धानन्द जी ने कहा फिर मैं शुद्धि का काम कैसे बन्द कर सकता हूँ?

इस प्रसंग में एक और घटना का उल्लेख करना उचित होगा, अभी जब स्वामी समर्पणानन्द जी जीवित थे तब हरियाणा के मुस्लिम बहुल मेवात क्षेत्र में आर्यसमाज का सम्मेलन हुआ था। उसमें स्वामी समर्पणानन्द जी ने मुस्लिम नेताओं के सामने हिन्दू बनने का प्रस्ताव रखा था, इसके उत्तर में उस समय के मुस्लिम नेता खुर्शीद अहमद, जो स्वयं धोती कुर्ता पहनते थे और पगड़ी बांधते थे- ने स्वामी जी के प्रस्ताव के उत्तर में कहा था, बाबा जी हिन्दू लोग हमारी लड़कियाँ तो ले लेंगे, हमारी लड़कियाँ सुन्दर होती हैं परन्तु हमारे लड़कों को आपके लोग लड़की देंगे? उस समय कोई पूर्णानन्द उस सभा में नहीं था अत: यह प्रस्ताव कार्यान्वित नहीं हो सका। हमारी घर वापसी तो हम चाहते हैं परन्तु घर की दशा अभी भी वही है। हमारे घर आज भी खण्डर ही हैं। हम उस खण्डर में रहने को अपना सौभाग्य मान रहे हैं। उस खण्डहर की एक विशेषता यह भी है उसमें से निकलकर बाहर जाने की स्वतन्त्रता सभी को है परन्तु लौट कर आने की अनुमति किसी को नहीं है। हम घर वापसी में जाने वालों को लौटकर आने का आग्रह तो कर रहे हैं परन्तु अपने प्रतिबन्ध उठाने की, समाप्त करने की बात नहीं कर रहे हैं, यह घर वापसी कैसी घर वापसी होगी?

वर्तमान परिस्थिति में घर वापसी को सफल बनाने का एक ही उपाय है, हिन्दू समाज के जाति समुदाय धर्मान्तरित हुए लोगों को अपनी जाति में मिलाने को तैयार हों तथा हिन्दू समाज छुआछूत, ऊँचनीच की भावना को छोड़ने को तैयार हो, तो घर वापसी में सफलता मिल सकती है। अन्यथा घर वापसी का शोर ईसाई-मुसलमानों को बल देगा। समाज में धर्मान्तरण करने वालो का प्रयास व्यक्तिगत स्तर तक है। वे ईसाई बने व्यक्ति किसी कीमत पर बाहर जाने देना पसन्द नहीं करते, इसके लिये उनके साधन और व्यवस्था दोनों ही हमारी अपेक्षा मजबूत हैं। हमें जो प्राकृतिक सुविधा प्राप्त है वह यह है कि वे सभी लोग पहले हिन्दू थे अत: उन्हें समाज में सम्मान मिले तो लौटकर अपने घर आने में कोई आपत्ति नहीं हो सकती। राजनीति और दंगे समाज में समुदायों के बीच दूरी बढ़ाते हैं। अन्यथा जाति के नाम पर मुसलमान जाट, हिन्दू जाट को एक किया जाना सरल है। मुसलमान गूर्जर और हिन्दू गूर्जर कश्मीर से इलाहबाद तक एक किये जा सकते हैं। मुसलमान राजपूत और हिन्दू राजपूतों को जाति संगठन अपना सकते हैं। अत: जमीनी स्तर पर कार्य करने की आवश्यकता है तभी घर वापसी सफल हो सकती है। वेद कहता है-

संगच्छध्वं संवदध्वम्।

- धर्मवीर

अविद्या क्षेत्रमुत्तरेषां प्रसुप्ततनुविच्छिन्नोदाराणाम्-४

- स्वामी विष्वङ्

महर्षि पतञ्जलि ने पिछले (तीसरे) सूत्र में क्लेशों के विभागों को बताते हुए उनके नाम भी बताया है। उन पाञ्चों विभागों वाले क्लेशों को **'विपर्यय'** भी कहते हैं। जिसप्रकार से पाञ्चों विभागों में क्लेशपन रहता है। उसीप्रकार यदि क्लेश के पर्यायवाचि शब्द अविद्या को लिया जाता है, तो वह अविद्यापन भी सभी विभागों में रहता है, ऐसा समझना चाहिए। क्लेशों के इन पाञ्चों विभागों में जितनी व्यापकता अविद्या विभाग की है उतनी व्यापकता बाकी विभागों की नहीं है। इसलिए महर्षि पतञ्जलि ने इस चौथे सूत्र में अविद्या विभाग की व्यापकता और उसकी मुख्यता को लेकर वर्णन किया है।

प्रस्तुत सूत्र के अर्थ को इस प्रकार समझना चाहिए कि **अविद्या**=पाञ्चों विभागों वाले क्लेशों में पहली विभाग वाली जो अविद्या है वह **क्षेत्रम्**=खेत है- उत्पत्ति स्थान है **उत्तरेषाम्**= बाद वाले अस्मिता, राग, द्वेष, अभिनिवेश का। जो कि ये क्लेश रूपी विभाग **प्रसुप्ततनुविच्छिन्नोदाराणाम्**= प्रसुप्त, तनु, विच्छिन्न, उदार के रूप में रहते हैं।

महर्षि वेदव्यास सूत्र की व्याख्या करते हुए लिखते हैं- **'अत्राविद्या क्षेत्रं प्रसवभूमिः'** अर्थात् यहाँ पर पाञ्चों विभागों में पहला विभाग जो अविद्या है वह खेत है अर्थात् उत्पत्ति स्थान है। किनका उत्पत्ति स्थान है? समाधान दिया है

उत्तरेषामस्मितादीनां चतुर्विधकल्पानां
प्रसुप्ततनुविच्छिन्नोदाराणाम्।

अर्थात् बाद वाले चार प्रकार के भेदों में रहने वालों (प्रसुप्त, तनु, विच्छिन्न और उदारों) का। यहाँ पर सूत्रकार एवं भाष्यकार दोनों ने अविद्या को खेत-प्रसवभूमि के रूप में प्रस्तुत किया है। जिस प्रकार से खेत उत्पन्न होने वाले फसलों का आधार है। बिना खेत के फसल नहीं हो सकती। ठीक उसीप्रकार बिना अविद्या के अस्मिता, राग, द्वेष, अभिनिवेश रूपी फसल नहीं हो सकती। इसलिए अविद्या को उत्पत्ति का स्थान बताया गया है। यहाँ उत्पत्ति स्थान के साथ-साथ बीज रूप भी है अर्थात् अविद्या से ही अस्मिता आदि क्लेश उत्पन्न होते हैं। अविद्या कारण और अस्मिता आदि कार्य के रूप में हैं। जिसप्रकार से खेत में धान रूपी बीज से कार्य रूपी धान उत्पन्न होते हैं। यहाँ पर खेत अलग है और धान अलग है। धान बीज है और खेत बीज का आधार है परन्तु अविद्या के सम्बन्ध में खेत भी अविद्या है और अस्मिता आदि क्लेशों का बीज भी अविद्या है। भाष्यकार महर्षि वेदव्यास ने यहाँ पर केवल खेत अंश को लेकर कथन किया है। उदाहरण में, उदाहरण के सभी अंशों को नहीं लिया जाता है। यह उदाहरण का सिद्धान्त है। यदि उदाहरण के सभी अंश लिये जाये, तो फिर वह उदाहरण नहीं रहेगा। इसलिए पाठकगण उदाहरण के नियमों के अनुसार ही अर्थ ग्रहण करें।

क्लेशों के पाञ्चों विभाग प्रत्येक (हर) समय एक जैसे नहीं रहते हैं अर्थात् एक ही काल में पाञ्चों कार्यरत नहीं होते हैं। इसलिए महर्षि पतञ्जलि ने उन क्लेशों के चार प्रकार के स्तर बताये हैं और वे स्तर इस प्रकार हैं- प्रसुप्त, तनु, विच्छिन्न और उदार। इन चारों स्तरों की व्याख्या करते हुए महर्षि वेदव्यास लिखते हैं- **'तत्र का प्रसुप्तिः'** अर्थात् उन चारों में प्रसुप्त किसे कहते हैं? समाधान के रूप में लिखते हैं कि

चेतसि शक्तिमात्रप्रतिष्ठानां बीजभावोपगमः।

अर्थात् चेतसि= मन में, शक्तिमात्रप्रतिष्ठानम्= केवल शक्ति रूप से विद्यमान अविद्या आदि पाञ्चों क्लेशों का बीजभावोपगमः= कार्यरत न होते हुए केवल बीजरूप से पड़े रहने को प्रसुप्त कहते हैं। महर्षि वेदव्यास ने यहाँ पर प्रसुप्त का अर्थ सोये हुए क्लेश बताये हैं। जिसप्रकार कोई मनुष्य रात्रि काल में सो जाता है, तो वह किसीप्रकार का जागरित व्यवहार नहीं करता है और जागने पर सभी प्रकार के व्यवहार करता है। ठीक इसीप्रकार पाञ्चों क्लेश सोये हुए पड़े रहते हैं। इस बात को एक लौकिक उदाहरण से समझ सकते हैं कि नवजात बालक में पाञ्चों क्लेश हैं। वह बालक ५-६ महिने का भी हो गया हो, तो भी क्लेश सोये हुए पड़े हैं। बालक उस स्थिति में काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार आदि के रूप में अविद्या, अस्मिता आदि क्लेशों से युक्त नहीं रहता है। इसका यह भी अभिप्राय नहीं है कि उस बालक में वे क्लेश नहीं हैं परन्तु वे क्लेश प्रसुप्त (सोये हुए) हैं। जैसे-जैसे बालक बड़े होने लगता है वैसे-वैसे क्लेश कार्यरत होने लगते हैं। बालक की जानकारी के स्तर पर क्लेश समय-समय पर व्यवहार में आते रहते हैं। ऐसे क्लेशों को 'प्रसुप्त' कहते हैं।

संसार में अनगिनत वस्तुएँ हैं। किस व्यक्ति में किस वस्तु के विषय में कौनसा क्लेश प्रसुप्त है, यह कहा नहीं जा सकता परन्तु यह निश्चित है कि किसी न किसी वस्तु के प्रति कोई न कोई क्लेश यानि अविद्या, अस्मिता, राग,

द्वेष या अभिनिवेश प्रसुप्त के रूप में प्रत्येक मनुष्य में विद्यमान हैं। कौनसा क्लेश कब किस काल में किस परिस्थिति में कितने वर्ष पश्चात् सोया हुआ जाग जायेगा, यह समय ही बतायेगा। यह सुनिश्चित है कि सब में सब क्लेश किसी न किसी रूप में विद्यमान रहते हैं। क्लेशों की व्यापकता आश्चर्यजनक है- क्लेशों कि विविधता है अर्थात् क्लेशों के प्रकार अनन्त है, ऐसा प्रतीत होते हैं। जितनी योनियाँ हैं उनकी हम मनुष्य गणना नहीं कर पाते हैं। इसलिए अनगिनत योनिया हैं, तो अनगिनत क्लेशों के प्रकार हैं अर्थात् मनुष्य योनि के क्लेश अलग प्रकार के हैं, पशुओं के, पक्षियों के, कीट पंतग के अलग-अलग प्रकार के हैं। इसप्रकार अनगिनत योनियों के अनगिनत प्रकार के क्लेश हैं। जब मनुष्य योनि में आत्मा आता है तब मनुष्य योनि से सम्बन्धित क्लेश ही कार्यरत होते हैं। बाकि योनियों से सम्बन्धित क्लेश प्रसुप्त रहते हैं। मनुष्य योनि से सम्बन्धित क्लेश भी अलग-अलग प्रकार के होते हैं। बाल्यकाल के, किशोरकाल के, युवाकाल के, प्रौढ़काल के और वृद्धावस्थाकाल के क्लेश अलग-अलग होते हैं। वृद्धावस्था वाले बाल्यकाल में जागरित नहीं होते हैं और बाल्यकाल में वृद्धावस्था वाले जागरित नहीं होते हैं। इसीप्रकार सभी अवस्थाओं से सम्बन्धित समझ लेना चाहिए। जब भिन्न अवस्था वाले जागरित नहीं होते हैं तब वे सब प्रसुप्त अवस्था में रहते हैं, ऐसा समझना चाहिए।

वर्तमान सृष्टि का काल चार अरब बत्तीस करोड़ का माना जाता है। इतने लम्बे समय के अन्तराल में कौनसा क्लेश किस वस्तु के विषय में कब तक प्रसुप्त रहेगा यह कहना कठिन है, परन्तु यह अवश्य कह सकते हैं कि किसी न किसी वस्तु सम्बन्धि क्लेश प्रसुप्त रहता है। अलग-अलग जन्मों में अलग-अलग वस्तुओं से सम्बन्धित क्लेश जागरित होते रहते हैं और बाकी क्लेश प्रसुप्त रहते हैं। वर्तमान सृष्टि का काल पूरा होने के बाद जब यह संसार अपने कारण सत्व, रज, तम में विलीन (प्रलय) हो जाता है। उस प्रलय काल में सभी क्लेश प्रसुप्त की स्थिति में रहते हैं और यह प्रसुप्त का काल चार अरब बत्तीस करोड़ का है। इतने लम्बे काल तक सभी क्लेश सोये पड़े रहते हैं। कोई व्यक्ति यह न समझे कि मुझ में अमुक-अमुक वस्तु के विषय में अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष या अभिनिवेश नहीं है बल्कि यह समझे कि मुझ में सभी क्लेश हैं। हाँ, यह हो सकता है कि वे क्लेश उन-उन विष्यों में प्रसुप्त हों। इसलिए प्रसुप्त अवस्था की व्यापकता को समझते हुए क्लेशों के विषय में आलस्य, प्रमाद न करते हुए क्रियायोग को अपना कर उन क्लेशों को कमजोर करने के लिए पुरुषार्थ करते रहना चाहिए।

प्रसुप्त अवस्था वाले क्लेश किस प्रकार से कार्यरत होते हैं, इस सम्बन्ध में बताते हुए महर्षि वेदव्यास लिखते हैं- **'तस्य प्रबोध आलम्बने सम्मुखीभावः'** अर्थात् तस्य= उस-उस सोये हुए क्लेश का प्रबोधः= जागजाना आलम्बने= अपने-अपने विषय की सम्मुखीभावः= उपस्थिति होने पर जागना होता है। अभिप्राय यह है कि सोये हुए क्लेश तब जाग जाते हैं जब रूप, रस, गन्ध, स्पर्श, शब्द वाले विषय सामने आ जाते हैं उदाहरण के लिए किशोर अवस्था से लेकर वृद्धावस्था तक स्तनपान करने वाला राग सोया पड़ा रहता है और वही राग दुबारा जन्म लेकर बाल्यावस्था को प्राप्त होने पर जाग जाता है। इस उदाहरण में बाल्यावस्था आलम्बन (विषय) है। जब तक बाल्यावस्था रूपी विषय सामने नहीं आता है तब तक स्तनपान करने वाला राग जागता नहीं है। इसीप्रकार अलग-अलग मनुष्यों में अलग-अलग परिस्थितियाँ उत्पन्न होती हैं। इसलिए अलग-अलग आलम्बन रूपी विषय जब मनुष्य के समक्ष उपस्थित होते हैं तब वे क्लेश जाग जाते हैं। अलग-अलग योनि के अलग-अलग विषयों के उपस्थित होने पर अलग-अलग प्रकार के क्लेश उपस्थित होते रहते हैं। मनुष्य योनि में भी रूप, रस, गन्ध, स्पर्श व शब्द से सम्बन्धित अलग-अलग विषय, देश, काल, परिस्थिति व समय के अनुसार अलग-अलग मनुष्यों के समक्ष उपस्थित होते रहते हैं।

क्या ये क्लेश सभी मनुष्यों के अन्दर जाग जाते हैं? अथवा कोई ऐसे मनुष्य भी होते हैं, जिनके समक्ष विषय उपस्थित होने पर भी क्लेश नहीं जागते हैं? इसका समाधान करते हुए महर्षि वेदव्यास कहते हैं-

प्रसंख्यानवतो दग्धक्लेशबीजस्य
सम्मुखीभूतेऽप्यालम्बने नासौ पुनरस्ति।

अर्थात् प्रसंख्यानवतः= उत्कृष्ट विवेकख्याति प्राप्त योगी को दग्धक्लेशबीजस्य= जिसके क्लेशों के बीज जल गये हैं, ऐसे योगी के जले हुए क्लेशों का आलम्बने=विषय (रूप, रस आदि) सम्मुखीभूतेऽपि= सामने आ जाने पर भी असौ=क्लेशों का जागरण पुनः= दुबार (फिर से) नास्ति= नहीं होता है। यहाँ पर महर्षि कहना चाहते हैं कि जिस योगाभ्यासी ने क्रियायोग आदि अनेक साधनों को अपना कर क्लेशों को कमजोर किया हो और यम, नियम आदि का व्यवहार में पालन करते हुए जिस सत्त्वपुरुषान्यताख्याति रूपी उत्कृष्ट विवेकख्याति को प्राप्त किया हो और उस प्रसंख्यान ज्ञान रूपी अग्नि से क्लेशों को जला दिया हो। ऐसे योगी के समक्ष जिस किसी भी रूप में विषय भोग उपस्थित हो जाये, तो भी क्लेश जागते नहीं हैं। ऐसा क्यों

होता है? इसका समाधान ऋषि करते हैं- **'दग्धबीजस्य कुतः प्ररोह इति।'** अर्थात् जिस योगी के क्लेश रूपी बीज ही जल गये हो, उसके जले हुए क्लेश रूपी बीज **कुतः प्ररोहः**= कैसे अंकुरित होंगे अर्थात् कभी भी नहीं हो सकते। इससे यह बात स्पष्ट होती है कि केवल योगी ही के समक्ष कितने ही विषय उपस्थित हो जाये, तो भी योगी क्लेश युक्त कभी नहीं हो सकता। ऐसी उत्कृष्ट स्थिति को प्राप्त करना प्रत्येक योगाभ्यासी का कर्त्तव्य बन जाता है।

जिस योगी ने अपने क्लेशों को दग्धबीज के समान बना लिया है, ऐसे योगी को क्या कहा जाता है, इस सम्बन्ध में ऋषि कहते हैं-

अतः क्षीणक्लेशः कुशलश्चरमदेह इत्युच्यते।

अर्थात् इसलिए ऐसे योगी को क्षीणक्लेशः= नष्ट हुए क्लेशों वाला कुशलः= सिद्धपुरुष और चरमदेहः= अन्तिम शरीर वाला इति उच्यते= ऐसा कहा जाता है। महर्षि ने यहाँ पर नष्ट हुए क्लेशों वाले योगी को सिद्धपुरुष के साथ-साथ चरमदेह वाला भी कहा है। चरमदेह का अभिप्राय यह है कि जिस योगी ने अपने भोग और अपवर्ग रूपी प्रयोजन को पूर्ण किया हो अर्थात् योगी ने क्लेशों व संस्कारों को नष्ट कर दिया है और समाधि लगा कर ईश्वर का दर्शन भी कर लिया है। ऐसे योगी जो करना था सो कर लिया अब और कछ करने योग्य कार्य नहीं रहा है। ऐसी स्थिति में योगी पहुँच जाता है जो उसे अब कुछ भी करने योग्य कार्य शेष नहीं रहा है। ऐसे योगी को मोक्ष में जाना ही शेष बचा है। ऐसे योगी को **'चरमदेह'** कहते हैं। वर्तमान शरीर पूर्व जन्म के कर्मों के फलस्वरूप है। इसलिए जिन कर्मों के फलस्वरूप वर्तमान शरीर है, वे कर्मफल पूर्ण होने पर वह योगी मोक्ष में चला जाता है। इसलिए उसे अन्तिम शरीर कहते हें क्योंकि उसे दुबारा जन्म लेना नहीं पड़ता है।

जिस योगी ने प्रसंख्यान रूपी विवेकख्याति को प्राप्त कर अविद्या आदि पाञ्चों क्लेशों को जले हुए बीजों के समान बना लिया है। ऐसे योगी के सम्बन्ध में महर्षि वेदव्यास कहते हैं-

तत्रैव सा दग्धबीजभावा पञ्चमी क्लेशावस्था नान्यत्रेति।

अर्थात् सा दग्धबीजभावा=वह जले हुए बीजभाव वाली, पञ्चमी= पञ्चवीं, क्लेशावस्था=क्लेश अवस्था (जो प्रसुप्त, तनु, विछिन्न, उदार की अपेक्षा से केवल योगी में रहने वाली पाञ्चवीं क्लेश अवस्था) तत्रैव=उस प्रसंख्यान रूपी विवेकख्याति प्राप्त योगी में ही रहती है। न अन्यत्रेति=अन्य (योगियों से रहित) मनुष्यों में नहीं रह सकती। यहाँ पर महर्षि ने क्लेशों की चार अवस्थाओं (प्रसुप्त, तनु, विच्छिन्न, उदार) से अलग पाञ्चवीं अवस्था का वर्णन किया है जो सूत्र में सीधा-सीधा नहीं कहा गया। यद्यपि सूत्रकार के अनुरूप ही भाष्यकार ने स्पष्ट किया है, क्योंकि जिसने क्लेशों को प्रसंख्यान रूपी अग्नि से जला दिया है। ऐसे योगी के समक्ष विषय उपस्थित होने पर भी योगी की प्रवृत्ति विषयों में नहीं होती है क्योंकि योगी ने क्लेशों को जला दिया है। उन जले हुए क्लेशों की भी एक स्थिति होती है उसी स्थिति को दग्धबीजभाव अवस्था कहते हैं और वह अवस्था उन चारों (प्रसुप्त आदि) से भिन्न है। इसलिए उसे पाञ्चवीं अवस्था के रूप में कथन किया है और वह केवल योगी में ही रहती है अयोगियों में नहीं।

महर्षि आगे लिखते हैं-

सतां क्लेशानां तदा बीजसामर्थ्यं दग्धमिति विषयस्य सम्मुखीभावेऽपि सति न भवत्येषां प्रबोध इति।

अर्थात् यद्यपि जले हुए क्लेशों की विद्यमानता योगी में होती है। अभिप्राय यह है कि योगी के मन में जले हुए क्लेश तो रहते हैं परन्तु बीजांकुरण वाली क्षमता, उगने की शक्ति जल जाती है। इस कारण से विषय (रूप रस आदि) भोग सामने आने पर भी उन जले हुए क्लेशों का जागरण नहीं होता। योगी और योग रहित व्यक्ति में यही विशेष अन्तर है। योग रहित व्यक्ति क्लेशों से प्रेरित होकर विषयों का भोग करता रहता है परन्तु जिस योगी ने क्लेशों को जला दिया है उस योगी में प्रेरित करने वाले क्लेश ही नहीं हैं उस स्थिति में योगी प्रसंख्यान रूपी तत्त्वज्ञान से युक्त हो कर विषयों का प्रयोग केवल मोक्ष के लिए करता रहता है। यहाँ पर कोई यह न समझे कि योगी विषयों का सेवन कभी नहीं करता अर्थात् खाना-पिना आदि व्यवहार, लेना-देना आदि व्यवहार, देखना-सुनना आदि व्यवहार कुछ भी नहीं करता हो, ऐसा नहीं है। योग रहित व्यक्ति के समान नहीं करता। हाँ, विषयों का सेवन क्लेशों से युक्त हो कर नहीं करता क्यों? क्योंकि क्लेशों को नष्ट (जला दिया) किया है। इसलिए विषय सेवन करने पर भी योगी को कोई बाधा उपस्थित नहीं होती है। यदि योगी क्लेश रहित हो कर विषय सेवन करता है, तो क्लेशों से उत्पन्न संस्कार ही नहीं बनते। जब संस्कार ही नहीं बनते तब संस्कारों से प्रेरित हो कर किये जाने वाले कर्म ही नहीं होंगे। ऐसी स्थिति में योगी के सारे कर्म मोक्ष को प्राप्त कराने वाले कर्म बन जाते हैं। इसलिए योगी जन्म-मरण के चक्र से ऊपर उठकर मोक्ष के भागी बन जाते हैं। यह ही योगी की जीवन मुक्त अवस्था है। ऐसे योगी की ही पाञ्चवी दग्धबीजभाव अवस्था बनती है। अन्यों को नहीं।

शेष भाग अगले अंक में.....

(परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित)

योग–साधना शिविर (प्राथमिक व द्वितीय स्तर)

दिनांक : १४ से २१ जून, २०१५

आज समाज के अनेक क्षेत्रों में अनेक प्रकार से लोग साधना के लिए प्रयासरत हो रहे हैं। अनेक प्रशिक्षकों द्वारा इस विषयक ज्ञान–विज्ञान भी प्रदान किया जा रहा है। फिर भी साधकों को साधना की सन्तुष्टिदायक स्थिति प्राप्त नहीं हो पा रही है। इसका कारण है कि साधना के विषय **साध्य, साधन, साधक व अन्य साधकों-बाधकों** के ज्ञान का वैदिक परम्परा से दूर होना। इस योग–साधना शिविर में इन्हीं विषयों का वैदिक–दर्शनों के द्वारा ज्ञान करवाया जायेगा, उससे सम्बन्धित जिज्ञासाओं का समाधान व आत्मनिरीक्षण के द्वारा अपनी उन्नति का मापदण्ड बताया जायेगा। यह शिविर अवश्य ही आपकी साधना की उन्नति में विशेष साधन बनेगा, जिससे कि मानव जीवन के मुख्य व चरम लक्ष्य की प्राप्ति उत्तरोत्तर काल में आप अपने निकट अनुभव करने लगेंगे।

प्रार्थियों हेतु नियम व अनुशासन

१. प्रत्येक प्रार्थी के लिए पूर्ण मौन अनिवार्य होगा।
२. शिविर के काल में किसी साधक के द्वारा नियम व अनुशासन भंग करने पर उसे शिविर के मध्य में ही शिविर छोड़ने के लिए बाध्य किया जा सकता है।
३. पूरे शिविर में साधक के द्वारा किसी भी माध्यम से बाह्य–सम्पर्क करना निषिद्ध रहेगा।
४. शिविर काल में किसी भी साधक को ऋषि उद्यान परिसर से बाहर जाने की अनुमति नहीं होगी।
५. साधकों की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति ऋषि–उद्यान परिसर में ही की जायेगी।
६. बाह्य–वृत्ति उत्पादक साधनों जैसे समाचार–पत्र पढ़ना, आकाशवाणी श्रवण व दूरदर्शन देखना, पर पूर्ण प्रतिबन्ध रहेगा।
७. किसी प्रकार का शारीरिक रोग यथा सर्दी, खाँसी, जुकाम अथवा अन्य कोई ध्वनि उत्पादक रोग वाले को प्रवेश नहीं दिया जायेगा।
८. बच्चों को साथ लाये जाने पर प्रार्थी को शिविर में प्रवेश नहीं दिया जाएगा।
९. किसी भी मादक द्रव्य, चाय–कॉफी आदि का सेवन निषिद्ध होगा।
१०. शिविर के प्रारम्भ दिन से लेकर समापन–सत्र पर्यन्त पूर्ण रूप से शिविर में भाग लेना अनिवार्य होगा।
११. नियम व अनुशासन के पालन को आवेदन में ही लिखित स्वीकार करना होगा।

उपरिलिखित किसी भी नियम व अनुशासन का पालन करने में असमर्थ व अयोग्य प्रार्थी को शिविर में प्रवेश नहीं दिया जायेगा।

प्रार्थियों के लिए सूचनाएँ–मन्त्री परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर (राज.) से संपर्क कर शिविर से पूर्व शुल्क जमा करवा कर अपने नाम का पंजीयन करा लें। शिविर में माता–बहिनें भी भाग ले सकती हैं। पुरुषों एवं महिलाओं के आवास की सामूहिक व्यवस्था पृथक्–पृथक् की जाती है। पृथक् कक्ष चाहने वालों को अतिरिक्त शुल्क १००० से २००० रु. देय होता है। पृथक् कक्ष की व्यवस्था पूर्व सूचना व उपलब्धता के अनुसार की जाती है। ऋषि उद्यान में दरी, गद्दे, तकिए एवं बर्तन उपलब्ध हैं शेष दैनिक उपयोग की वस्तुएँ यथा मंजन, ब्रश, साबुन, तेल, दवाएँ, बिछाने–ओढ़ने की चादरें, लिखने के लिए संचिका (नोटबुक), लेखनी, करदीप (टार्च) आदि को साधक अपने साथ लाएँ। वस्त्र सादगी एवं शिष्टाचार के अनुकूल हों, आभूषणों एवं सुगन्धित द्रव्यों का उपयोग न हो। आपके पास योगदर्शन हो तो साथ लाएँ अन्यथा यहाँ भी क्रय किया जा सकता है। सतर्कता की दृष्टि से कीमती वस्तुएँ साथ न लायें। यदि आपको कोई संक्रामक रोग, तेज खांसी, दमा, मिर्गी आदि मानसिक रोग, वायु विकार या अन्य गंभीर रोग हो, तो कृपया शिविर में आना स्थगित रखें। यदि अपने कार्य स्वयं न कर सकते हों तो सहायक साथ

में लायें। अजमेर या निकटवर्ती स्थल (पुष्कर) देखना चाहें, तो शिविर से पूर्व या पश्चात् अतिरिक्त समय निकाल कर आयें। लौटने का रेल-आरक्षण शिविर में आने से पूर्व करवा लें। अजमेर पहुँचने की सूचना घर पर देनी हो तो शिविर स्थल में प्रवेश से पहले दे देवें। खाने पीने की वस्तुएँ साथ न लावें।

यह शिविर परोपकारिणी सभा, अजमेर के सौजन्य से आयोजित किया जा रहा है। शिविर शुल्क १००० रु. मात्र जमा करना होगा। शिविर में भाग लेने वालों को शिविर के प्रारंभ दिनांक को सायं चार बजे तक शिविर स्थल ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर में पहुँच जाना आवश्यक है क्योंकि इसी दिन शाम को शिविर के अनुशासन एवं विभिन्न व्यवस्थाओं संबन्धी महत्त्वपूर्ण सूचनाएँ दी जाएँगी। शिविर का समापन अन्तिम दिन दोपहर एक बजे तक होगा। शिविर समाप्ति से पूर्व जाने की अनुमति नहीं दी जायेगी।

शिविर से आपका जीवन श्रेष्ठतर व पवित्रतर बने, इन्हीं शुभकामनाओं के साथ।

मन्त्री, परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर दूरभाष : ०१४५-२४६०१६४
email:psabhaa@gmail.com

: मार्ग :

ऋषि उद्यान शिविर स्थल पर पहुंचने के लिए फॉयसागर की ओर जाने वाली सिटी बस या ऑटो-रिक्शा, रेल्वे स्टेशन व बस स्टेण्ड से (वाया-आगरा गेट/फव्वारा चौराहा) सर्वदा सुलभ रहते हैं।

-संयोजक

धनराशि भेजने हेतु सूचना

चैक, ड्राफ्ट, धनादेश (मनीआर्डर) द्वारा राशि भेजने वाले उस पर '**मन्त्री परोपकारिणी सभा**' अवश्य लिख दें। दानी महानुभाव ऑनलाइन भी राशि जमा करवा सकते हैं। भारतीय स्टेट बैंक में एक सहस्र तक की राशि जमा कराने वाले **२५ रु. बैंक सेवा शुल्क के रूप में अतिरिक्त** जमा करवाने की कृपा करें। कृपया राशि निम्नांकित बैंकों में ऑनलाइन भिजवाकर, जमा कराई गई स्लिप के साथ उद्देश्य लिखकर सभा कार्यालय को सूचित करवाने का कष्ट करें।

खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर

१. बैंक बचत खाता (Savings) संख्या-091104000057530 बैंक का नाम-आई.डी.बी.आई. बैंक, पावरहाउस के सामने, जयपुर रोड, अजमेर।
IFSC - IBKL0000091

२. बैंक बचत खाता (Savings) संख्या - 10158172715 बैंक का नाम - भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।
IFSC - SBIN0007959

मनुष्यों को उचित है कि परमेश्वर में ही मन बुद्धि को युक्त कर विद्वानों के सङ्ग से विद्या को पा सुखी हो अन्य मनुष्यों को भी इसी प्रकार आनन्दित करें।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ५.१४

जैसे विद्वान् लोग ईश्वर की सृष्टि में विद्या से पदार्थों की परीक्षा करके कार्य्यों में उपयोग कर सुखों को प्राप्त करते हैं वैसे ही सब मनुष्यों को इस यज्ञ का अनुष्ठान कर सब सुखों को पहुँचाना चाहिये।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ५.२२

ध्यान प्रशिक्षण योजना

ध्यान का महत्त्व सदा से रहा है। आज के तनाव व प्रतिस्पर्धा के वातावरण में यह अधिक आवश्यक हो गया है। नई पीढ़ी यज्ञादि कर्मकाण्ड की अपेक्षा-ध्यान में अधिक रुचि व आकर्षण रखने लगी है। प्रौढ़ों व वृद्धों की आध्यात्मिक उन्नति की चाह ध्यान के माध्यम से पूरी हो सकती है। समाज सुधार व उन्नति के इच्छुक व इसमें प्रयत्नशील आर्यों को ध्यान प्रशिक्षण का उपाय सार्थक लगेगा। ऐसी इच्छा वाले सज्जन अपने यहाँ किसी भी आर्यसमाज, आर्य संस्था, विद्यालय, महाविद्यालय, गुरुकुल, सार्वजनिक स्थान आदि में 'ध्यान-प्रशिक्षण' करवाना चाहते हों, तो कृपया अपने व कार्यक्रम-स्थान, समय आदि की पूरी सूचना के साथ सम्पर्क करें।

परोपकारिणी सभा द्वारा प्रशिक्षित अनेक ध्यान-प्रशिक्षक इस कार्य में सेवा के लिए तैयार हैं। ये ध्यान-प्रशिक्षक आपके जनपद के निकट भी उपलब्ध हो सकते हैं। आयोजकों को कार्यक्रम हेतु स्थान, बैठक-व्यवस्था, आवश्यक हो तो माईक आदि की व्यवस्था, प्रशिक्षक के निवास, भोजन, आवागमन यात्रा आदि की व्यवस्था करनी होगी।

सम्पर्क-संयोजक, ध्यान प्रशिक्षण योजना, परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर, ३०५००१, दूरभाष-०१४५-२४६०१६४, ईमेल-psabhaa@gmail.com

यू-ट्यूब पर वीडियो प्रवचन उपलब्ध

वेद एवं आर्ष साहित्य में रुचि रखने वाले आर्यजगत् एवं धार्मिक जनों को यह जानकर प्रसन्नता होगी कि अब यू-ट्यूब पर अनेक वैदिक आर्य विद्वानों के सैंकड़ों नये-नये प्रवचन उपलब्ध हैं। विश्व में कहीं पर भी इन्टरनेट से जुड़ कर ये प्रवचन नि:शुल्क सुने-देखे तथा डाउनलोड किये जा सकते हैं। आप जहाँ भी हैं, यदि आपको वैदिक आर्ष ज्ञान की पिपासा है, वेद एवं आर्ष ग्रन्थों के स्वाध्याय के साथ आप इन पर विद्वानों के प्रवचन भी सुनना चाहते हैं, तो इन्टरनेट से जुड़ कर सरलता से सुन सकते हैं।

इसके लिए you tube पर जाकर playlist of paropkarini sabha लिख कर सर्च करें, तो आपको अनेक प्लेलिस्ट मिलेंगी, यथा- वेद प्रवचन, योग दर्शन, ईशोपनिषद् आदि। इनमें इच्छानुसार जाकर लाभ उठाया जा सकता है। आप अपने परिचितों को यह सूचना देकर उन्हें भी लाभ उठाने को प्रेरित कर सकते हैं। भविष्य में अन्य भी नये-नये प्रवचन इस सूची में उपलब्ध कराये जाते रहेंगे।

वैचारिक क्रान्ति के लिए सत्यार्थ प्रकाश पढ़ें।

।। ओ३म् ।।

अलग-अलग स्तरों में योग-साधना शिविर

परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित ऋषि-उद्यान, अजमेर में वर्षों से अब तक योग्य आचार्यों द्वारा योग-साधकों का निर्माण करने के लिए वर्ष में दो बार योग से सम्बन्धित व ध्यान से सम्बन्धित शिविरों का आयोजन किया जाता रहा है और साधकों के सर्वांगीण विकास के लिए प्रयास किया जाता रहा है। समाज में और अधिक योग्य व आदर्श साधकों की आवश्यकता अनुभव करते हुए इस वर्ष जून मास के शिविर में नवीन पाठ्यक्रम की विधि अपनाकर इस दिशा में एक नया मोड़ दिया गया है।

परोपकारिणी सभा द्वारा ऋषि उद्यान में योग-साधना शिविर (प्राथमिक स्तर) के दो शिविर लगाये जा चुके हैं। यह शिविर ध्यान से सम्बन्धित, ईश्वर-जीव-प्रकृति के वास्तविक स्वरूप को जानने से सम्बन्धित, योगदर्शन व सांख्यदर्शन के कुछ प्रमुख विषयों के सूत्रों के माध्यम से प्राथमिक स्तर पर योगदर्शन व सांख्यदर्शन को जानने-समझने से सम्बन्धित, आत्मनिरीक्षण में कुछ नये विषयों को सूक्ष्मता से समझने से सम्बन्धित, दिनचर्या को अनुशासित व सात्त्विक बनाने से सम्बन्धित तथा विभिन्न सैद्धान्तिक व व्यावहारिक विषयों के ज्ञान से सम्बन्धित प्रारम्भिक स्तर के योग के इच्छुक साधकों के लिए लगाया गया। इस योग-साधना शिविर को आगामी वर्षों में चतुर्थ स्तर तक लगाने की योजना बनाई गई है। प्रारम्भिक स्तर से लेकर द्वितीय, तृतीय और चतुर्थ स्तर तक के शिविरों में पूर्व सूचित पाठ्यक्रमित विषयों में अधिक से अधिक सूक्ष्मता, दिनचर्या में और अधिक अनुशासन व सात्त्विकता, आहार-शुद्धि से लेकर मन, आत्मा की शुद्धि पर्यन्त अनुभवात्मक स्तर पर योग-साधकों को ज्ञान करवाया जाएगा। प्रत्येक स्तर के साधकों को उनके सैद्धान्तिक व व्यावहारिक ज्ञान से सम्बन्धित तथा उनके व्यक्तिगत आचरण व अनुशासन को दृष्टि में रखते हुए परीक्षा-पद्धति के माध्यम से प्रथम-श्रेणी व उच्च प्रथम-श्रेणी के प्रमाण-पत्र दिए जायेंगे। इस प्रकार की विधि से योग्य साधकों को समाज में सम्मान मिलेगा तथा वे और अधिक उत्साह से समाज व देश के कल्याण के लिए कार्यरत होंगे, उन्हें देखकर अन्य साधक भी प्रेरित होंगे।

परोपकारिणी सभा व गुरुकुल ऋषि उद्यान के योग्य आचार्यों व संयोजकों द्वारा नवनिर्मित इस योजना के प्राथमिक स्तर में पर्याप्त उपलब्धि हुई है। भविष्य में इस योजना में आप सब के सहयोग की आवश्यकता है।

लेखकों से निवेदन

परोपकारी में उन लेखों, कविताओं, रचनाओं को दिया जाता है, जो **मौलिक व अप्रकाशित** हों। अत: सभी लेखकों से निवेदन है कि वे अपनी उन्हीं रचनाओं को भेजें जो मौलिक व अप्रकाशित हों।

अनेक लेखक मौलिक व अप्रकाशित रचना तो भेजते हैं, किन्तु उसे एक साथ **अनेक पत्रिकाओं को भेजते हैं।** अत: लेखकों से यह भी निवेदन है कि वे कृपया परोपकारी को वे ही रचना भेजें, जो अन्य पत्रिकाओं के लिए न भेजी हो। परोपकारी में छपने के बाद यदि अन्यत्र भेजना चाहें तो यह उनकी इच्छा पर निर्भर करता है।

कृपया लेख के अन्त में अपना **पूरा पता व चल-दूरभाष संख्या अवश्य लिखें।** लेख के स्वीकृत-अस्वीकृत होने की सूचना चल-दूरभाष पर संक्षिप्त संदेश द्वारा प्रेषित कर दी जायेगी। **परोपकारिणी सभा द्वारा रचनाओं के लिए किसी प्रकार का भुगतान नहीं किया जाता है।**

रचयिता अपनी रचना की एक प्रति कृपया अपने पास रखकर भेजें, क्योंकि **अस्वीकृत रचनायें डाक द्वारा लौटाई नहीं जाती हैं।** स्वीकृत रचना परोपकारी के किसी आगामी अङ्क में देखी जा सकती है। रचना के प्रकाशन में छ: माह या अधिक समय भी लग सकता है, अत: कृपया तब तक रचना को अन्यत्र न भेजें। **-संपादक**

कुछ तड़प-कुछ झड़प

– राजेन्द्र जिज्ञासु

कर्नाटक के आर्य हुतात्मा:- परोपकारिणी सभा ने दक्षिण भारत के प्राणवीर हुतात्मा वेदप्रकाश जी के बलिदान के ७६ वर्ष पूरे होने पर उनकी लम्बी परम्परा के सब आर्य हुतात्माओं का स्मरण करते हुए दक्षिण भारत के सब आर्य बलिदानियों की स्मृति में कार्यक्रम का आयोजन करके अत्यन्त दूरदर्शिता का परिचय दिया है। आर्यसमाज की वेदी से बोगस इतिहासकार यत्र-तत्र स्वराज्य संग्राम के क्रान्तिकारियों की माला फेरते हुए अनाप-शनाप और हास्यास्पद बातें कहते रहते हैं। अभी जोधपुर में श्री डॉ. वेदपाल जी की कोटि के शिरोमणि वेदज्ञ कह रहे थे कि अब स्वामी दर्शनानन्द, स्वामी वेदानन्द, स्वामी आत्मानन्द, पं. धर्मभिक्षु और पं. शान्तिप्रकाश जी जैसे तपस्वी सिद्धान्त मर्मज्ञ विद्वान् बनने की ललक किसी में क्यों जगेगी?

उनका नाम कौन लेता है? उनका आदर्श युवकों के सामने कभी रखा ही नहीं जाता। मान्य वेदपाल जी का यह कथन एक कठोर सत्य है। कोई भी देवी-देवता रानी झांसी की कहानी सुनाकर मुँह माँगी दक्षिणा ले जाता है। वेदज्ञ, दर्शनों के मर्मज्ञ विद्वान् मुँह खोले तो उनकी प्रतिष्ठा मिट्टी में मिल जाये।

कुछ समय पूर्व कर्नाटक के एक समाज ने डॉ. राधाकृष्ण जी वर्मा से कर्नाटक के आर्य हुतात्माओं के नाम पूछे। वह उनके नाम एक पुस्तक में देना चाहते थे। डॉ. वर्मा जी ने उन्हें बताया कि जिज्ञासु जी सब नाम बता सकते हैं। उनसे सम्पर्क कीजिये। समाज वालों ने चलभाष पर नाम पूछे तो सेवक ने बता दिये। आश्चर्य का विषय है कि हुतात्माओं ने कहाँ-कहाँ प्राण दिये उन नगरों व ग्रामों का नाम तक कोई नहीं जानता।

मतावलम्बी तो अपने पीरों व सन्तों ने कहाँ रात बिताई, कहाँ विश्राम किया और कहाँ दातुन करके उसे फेंका- उन स्थानों पर स्मारक खड़े कर चुके हैं। कर्नाटक में वीर गोविन्दराव को घोड़ेवाड़ी में जीवित जलाया गया। एक लम्बे समय के पश्चात् इस सेवक ने वहाँ के एक मन्दिर में वेद-प्रचार किया। फिर कौन घोड़ेवाड़ी प्रचार करने गया? जहाँ आर्यवीर को जीवित जलाया गया क्या आर्यवीर दल के सेनापति कभी वहाँ गए? उस स्थान का चित्र कहीं है?

आर्यो! ऋषि के मिशन को सींचना चाहते हो तो अजमेर, गुंजोटी, धारूर, लातूर, कलम, परली, अकोला, बीदर में श्याम भाई व पं. नरेन्द्र जी का नाम लेकर झूम-झूम कर यह तान सुनाते पहुँचो:-

वीर काशी कृष्ण भीम जीवित जले,
'धर्म' 'शिव' 'वेद' की प्यारी प्यारी लड़ी।
दिन बदलते गये युग नया आ गया,
तेरी सेना तली पर जो सिर धर चली।।

ऋषि का पत्र व्यवहार:- परोपकारिणी सभा ऋषि के पत्र-व्यवहार को पुन: प्रकाशित करने जा रही है। श्रीमान् विरजानन्द जी ने इन पर बहुत परिश्रम किया है। मैंने डॉ. अशोक आर्य जी को भी इस विषय में कुछ कार्य सौंपा है। सभा पत्र-व्यवहार का प्रकाशन शीघ्र कर ही देगी फिर यह विनीत भी पत्र-व्यवहार पर अपना चिन्तन-मनन एक पुस्तक के रूप में देगा। कुछ प्रतीक्षा कीजिये। जिन महापुरुषों ने ऋषि के पत्रों की सुरक्षा व संग्रह का कठिन कार्य किया- हम उनकी तपस्या व उपकार का मूल्याङ्कन नहीं कर सकते।

इन्हीं दिनों श्रीयुत् मनमोहन कुमार जी आर्य ने एक लेख में ऋषि के पत्र-व्यवहार पर कुछ लिखा है। डॉ. अशोक आर्य जी ने आर्य संसार में एक लेख दिया। मैंने दोनों लेख सुरुचि से पढ़े। दोनों अच्छे लगे परन्तु अधूरे लगे। कुछ चूक भी दोनों में पाई जो स्मृति दोष से हुई। 'आर्यसमाचार' मासिक उर्दू पत्र था। श्रीयुत् मनमोहन जी इसे हिन्दी मासिक समझने की भूल कर बैठे। ऋषि जीवन में कई बार मैंने इसे हिन्दी मासिक लिखा है।

डॉ. अशोक जी ने पं. भगवद्दत्त जी द्वारा संग्रहीत व प्रकाशित पत्रों के छापे गये पहले चार भागों को भी रामलाल कपूर ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित लिखा है। यह तथ्य नहीं है। तब रामलाल कपूर ट्रस्ट था ही नहीं। ऋषि के पत्रों की खोज, संग्रह व सम्पादन के इतिहास पर दोनों ने कई विद्वानों के नामों की चर्चा की है। इन्होंने श्रद्धेय मीमांसक जी के तथा मेरे चिन्तन को ध्यान से पढ़ा होता तो इनके लेखों का महत्त्व व उपयोगिता बढ़ जाती। ऋषि के पत्रों की खोज व संग्रह के आन्दोलन के जनक पं. लेखराम जी थे। मेरे इस मत से पूज्य मीमांसक जी भी सहमत हैं। मैंने खुलकर ऐसा सिद्ध किया है। पं. युधिष्ठिर जी के लेखों व टिप्पणियों की भी यही ध्वनि है। ऋषि-जीवन में पत्रों का प्रयोग उपयोग करने वाले जीवनी लेखक पं. लेखराम जी ने पं. घासीराम जी, दीवान हरबिलास जी, श्री लक्ष्मण जी तथा इस सेवक को एक दिशा दी। ऋषि के पत्रों का सर्वाधिक उपयोग लक्ष्मण जी के ग्रन्थ 'महर्षि दयानन्द का सम्पूर्ण जीवन चरित्र' में ही किया गया है।

इस आन्दोलन में श्रीयुत् महाशय कृष्ण जी के योगदान की उपेक्षा करना हमारे लेखकों की भयंकर भूल है। ऋषि भक्त सरदार रूपसिंह, महाकवि शंकर, पूज्य महात्मा नारायण स्वामी जी आदि का योगदान भी बहुत महत्त्वपूर्ण है। इस पर कभी फिर लिखा जायेगा। पूज्य पं. युधिष्ठिर जी मीमांसक के तप व लगन को तो मेरा रोम-रोम नमन करता है। इस आन्दोलन को और आगे बढ़ाने में डॉ. धर्मवीर जी तथा पं. विरजानन्द जी की देन पर विस्तार से लिखने की आवश्यकता है। इस तथ्य की उपेक्षा करना इतिहास से बहुत बड़ा अन्याय है। हमारे विद्वानों ने इन दो गुणियों द्वारा खोजे गये पं. श्रद्धाराम जी के पत्र पर कभी गम्भीर चिन्तन नहीं किया। इसके लिए हम किसी को दोष नहीं देते। यही मानना होगा कि नई पीढ़ी में अभी कोई महाशय मामराज नहीं जन्मा है।

आश्चर्य है कि श्री मनमोहन जी आर्य तथा डॉ. अशोक आर्य पं. चमूपति जी को कैसे भूल गये? दोनों पण्डित जी के भक्त हैं। आचार्य रामदेव जी ने पत्र संग्रह आन्दोलन में प्रशंसनीय व स्मरणीय कार्य किया था।

पूर्व भारत से एक पत्रः- गोरखपुर जनपद से पूर्व भारत के एक बहुत स्वाध्यायशील सिद्धान्तप्रेमी आर्य श्री लक्ष्मनसिंह जी परोपकारी के एक नियमित पाठक हैं। 'कुछ तड़प कुछ झड़प' को पढ़ते-पढ़ते आपको यह निश्चय हो गया है कि जैसे मध्यकाल में स्वार्थी लोगों ने प्राचीन ग्रन्थों में प्रक्षेप करने का घृणित पाप किया, ठीक ऐसे ही आर्यसमाज में घुसकर कुछ निहित स्वार्थ के कारण आर्यसमाज के इतिहास तथा ऋषि जीवन में प्रक्षेप करने का निरन्तर दुष्कर्म किया है। इतिहास प्रदूषण का सप्रमाण प्रतिकार व प्रतिवाद करने पर परोपकारी द्वारा हमारी सेवाओं पर बधाई देते हुए आपने लिखा है कि आर्यसमाज के इतिहास की रक्षा के लिए कुछ सजग सुयोग्य युवकों को तैयार करें।

ऐसे सब ऋषि भक्तों की मनोकामना का मैं हृदय से सम्मान करता हूँ। ईश्वर की कृपा से ऐसे कई आर्यवीर मेरे सम्पर्क में हैं। वे सब इस दिशा में सक्रिय हैं। इन सबमें श्री धर्मेन्द्र जिज्ञासु जी इतिहास प्रदूषण रोकने में पूरे सक्षम हैं। श्री हर्षवर्धन भी योग्य हैं। देखना होगा कि वह क्या कर दिखाते हैं। इतिहास विषय में आर्यसमाज पर पीएच.डी. करते हुए अनुभवी इतिहासकारों से आपने प्रशंसा प्राप्त की है। उनकी कुछ निजी समस्यायें हैं परन्तु आपको हम आगे चलकर सक्रिय कर सकेंगे। डॉ. हर्षवर्धन, श्री डॉ. धर्मवीर जी के सगे भतीजे हैं। परिवार के संस्कार हैं। धर्मवीर जी तथा स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराष्ट्र के संकेत आदेश से वह बाहर नहीं। श्री राहुल जी अकोला की मित्रमण्डली में उच्च शिक्षित आर्य युवक हैं। ये सब मिलकर जो कुछ कर रहे हैं वह आर्यों के सामने निरन्तर आता रहेगा।

एक बात नोट कर लें। यह प्रदूषण का आन्दोलन सन् १९७८ में बड़ी चतुराई से एक लेख लिखकर आरम्भ किया गया। इस लेख के लेखक ने यह घोषणा की थी कि ऋषि दयानन्द जी के व्यक्तित्व व जीवन को जितना रोमाँ रोलाँ, श्री अरविन्द, ट.ल. वासवानी, डॉ. जे जार्डन्स, पादरी स्कॉट ने समझा, आर्यसमाज में किसी ने नहीं समझा। लेखक स्वयं को तो सर्वज्ञ व सबसे बड़ा इतिहासज्ञ मानता ही है।

श्री अरविन्द घोष महान् क्रान्तिकारी रहे। कुशल अंग्रेजी प्राध्यापक, ऋषि के प्रशंसक थे। यह ठीक है परन्तु क्या वह काली की पूजा नहीं करते थे? ईशोपासना में ऋषि का सिद्धान्त क्या वह समझ सके। ऋषि ने स्वयं को स्त्रियों से दूर-दूर रखकर ब्रह्मचर्य व्रत की रक्षा की। एक मर्यादा की स्थापना की। क्या अरविन्द जी ने इस मर्यादा को जाना, समझा व अपनाया? वासवानी जी के मीरा स्कूल के बच्चे पूना में दादा (वासवानी जी) से अपने पैन का स्पर्श करवाकर परीक्षा में बैठते थे। ऐसा शुभ माना जाता था। इस अन्धविश्वास पर श्री वासवानी जी को आपत्ति न थी। डॉ. जोर्डन्स ने ऋषि के गो-रक्षा के अभियान को हिन्दुओं में लोकप्रियता के लिए एक चाल लिखा है। प्रदूषण फैलाने के आन्दोलन के मुखिया जी इस पर आज तक तो मौन साधे हुए हैं।

हमारा मत तो यह है कि रोमा रोलाँ हों अथवा श्री अरविन्द घोष जी यह ऋषि को इतना नहीं समझ सके जितना पं. लेखराम जी, स्वामी दर्शनानन्द, स्वामी आत्मानन्द, पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय, पं. भगवद्दत्त, स्वामी वेदानन्द आदि। इतिहास प्रदूषण के जन्मदाता के अहं का उपचार तो कोई कर नहीं सकता। वह एक सांस में नन्हीं वेश्या को वैष्णव बताकर चरित्र की पावनता का प्रमाण पत्र देता है तो दूसरे सांस में एक ही लेख में उसे ४-५ बार वेश्या लिखता है। पापी पेट के लिए ऐसा करना व कहना उसकी विवशता है।

ऋषि दयानन्द के प्रति द्वेषाग्निः- हरियाणा के एक महन्त रामपाल के मन में ऋषि के प्रति द्वेषाग्नि का महाभण्डार है। वह महर्षि के जीवन पर, चरित्र पर ओच्छे वार करने में ही लगा रहता है। न जाने किसके कहने पर, किसके दबाव पर और किस प्रयोजन से वह ऋषि पर निरन्तर वार-प्रहार करने में ही लगा रहता है। हरियाणा में जन्मे लाला जीयालाल ने ही सबसे पहले ऋषि की निन्दा में (ऋषि के बलिदान के पश्चात्) सबसे गन्दी आपत्तिजनक

पुस्तक लिखी थी। उसी पुस्तक में उसे कई बार महर्षि की भूरि-भूरि प्रशंसा करनी पड़ी थी। ऐसे ही महर्षि के निन्दक और भी कई मतावलम्बियों को ऋषि जी का गुणगान करना पड़ा। राधास्वामी मत के तीसरे गुरु श्री हजूर जी महाराज ने तो आलोचना करते हुए लिखा भी बहुत कुछ और महर्षि की सेवाओं व निर्मल चरित्र की प्रशंसा भी जी भर कर की।

महन्त रामपाल स्वयं को कबीरपन्थी बताता है। हजूर जी महाराज भी मूलत: कबीरपंथी है। रामपाल को एक बार झज्जर के आसपास एक ग्राम में मानव देह में ईश्वर भी घूमता-फिरता मिल गया था। यह महन्त जी के एक लेख में हमने कभी पढ़ा था। कबीर पन्थियों पर तो वैसे ही महर्षि का असीम उपकार है। दो कबीर पन्थी भाई चाँदापुर उ.प्र. में मेला ब्रह्म विचार करवाया करते थे। वहाँ पादरी व मौलवी आकर प्रचार करके छा गए। सबके धर्मच्युत होने से वे दोनों भाई चिन्तित थे। परकीय मतों से लोगों को कैसे बचाया जावे? यह कार्य महन्त रामपाल जैसे कबीर पन्थियों के बस का तो है नहीं।

हजूर जी महाराज तथा सब जीवनी लेखकों ने लिखा है कि बुद्धिमानों के सुझाने पर मुंशी इन्द्रमणि जी तथा ऋषि दयानन्द जी को उन दोनों भाइयों ने बुलवाया। हजूर जी महाराज कबीरभक्त अनुसार तब हिन्दुओं ने पहली बार एक हिन्दू मुनि महात्मा से परास्त होकर मौलवियों व पादरियों को भागते देखा। पाँच दिन शास्त्रार्थ करने की शर्तें करके आये गोरे-काले पादरी व मौलवी बिना बताये मैदान छोड़कर भाग निकले। महन्त जी इस इतिहास को पचा गये या भूल गए? उन दोनों भाइयों का आर्यसमाज से, ऋषि मिशन से कुछ लगाव हो गया। कृतज्ञता से इस कबीरपन्थी हरियानवी महन्त ने ऋषि के इस उपकार के लिए दो शब्द नहीं कहे।

१. एक रट यह लगा रखी है कि पं. लेखराम जी लिखित ऋषि जीवन में ऋषि दयानन्द के हुक्का पीने व नसवार सूँघने की बात लिखी है। पं. लेखराम जी अपने ग्रन्थ को पूरा न कर सके। उन्हें ग्रन्थ का प्राक्कथन लिखने का अवसर ही उनको नहीं मिला। घटनायें बताने वाले जो कुछ उन्हें बताते गये, वे नोट करते गये। उनकी विवेचना न हो सकी। कुछ व्यक्तियों ने हुक्का पीने की बात कही तो हुक्का छोड़ने की बात भी कई एक ने बताई। ऋषि कई प्रदेशों में गये। कुछ ही नगरों में हुक्का पीने की बात कही गई। साधु वैसे ही हुक्का नहीं पीते। वे चिलम पीते हैं। हमने कुम्भ मेले पर एक भी साधु को हुक्का पीते नहीं देखा। चिलम पीते सैंकड़ों साधु उज्जैन में देखे। इस से हुक्का पीने की घटनायें जो पं. लेखराम जी को बताई गईं वे सब निराधार सिद्ध हुईं। यह तो पं. लेखराम जी की सत्यनिष्ठा है कि वे सबकी सुनाई कहानी नोट करते गये।

२. काशी, फरुखाबाद, चाँदापुर, कानपुर, हुगली में कड़ा विरोध हुआ। शास्त्रार्थ भी हुए। वहाँ हुक्का पीना न तो किसी ने बताया और न ही किसी विरोधी ने ऐसा लिखा। इससे हुक्का पीने की कहानी गढ़न्त से बढ़कर कुछ भी नहीं।

३. मुंशी कन्हैयालाल जी की पत्रिका, नूरअफ़शाँ ईसाई पत्र 'विद्याप्रकाशक' मासिक लाहौर, काशी, बंगाल, आगरा, गुजरात, मुम्बई, पूना के पत्रों व विरोधियों के लेखों में ऋषि के बारे में बहुत कुछ लिखा गया। ईसाई, बौद्ध, पौराणिक, देशी-विदेशी किसी भी पत्रकार ने हुक्का पीने की कोई चर्चा नहीं की। नीलकण्ठ शास्त्री ईसाई पादरी तथा पादरी खड़कसिंह, पादरी बेरिंग ने भी हुक्का पीने की बात न कही और न लिखी। ऋषि शाहपुरा में, उदयपुर व जोधपुर में लम्बा समय रहे। वहाँ न हुक्का पीने की घटना सुनाई गई और न नसवार सूँघने की।

४. ऋषि ने मादक पदार्थों के सेवन का यत्र-तत्र खण्डन किया है। उनके जीवन से प्रेरणा पाकर अनेक शिष्यों ने हुक्का व मांस-मदिरा के व्यसन छोड़े।

५. महन्त जी के परिवार में और देश भर में अब बालविवाह को लोग छोड़ गये। वेद पढ़ने-पढ़ाने का सबको अधिकार मिल गया। अभी केरल में राजमाता गौरी लक्ष्मी जी ने वेदभाष्य का विमोचन किया। दलितोद्धार, नारी शिक्षा का प्रचार, एक प्रभु की पूजा, निडरता से स्वराज्य की बात करने वाले किसी महन्त सन्त का नाम आप बतायें। हम भी देखें कि आपके सन्त-महन्त कितने देशभक्त, क्रान्तिकारी, निडर तथा ईश्वर विश्वासी थे।

६. महोदय नसवार औषधि भी है। तम्बाखू का प्रयोग दन्त रोग में भी बहुत होता है। आप इसे उछालते रहिये। चेलियों से घिरे रहने वाले सन्तों की पोल खोलने वाला बाल ब्रह्मचारी निष्कलङ्क दयानन्द आप जैसे वैभवशाली गुरुओं की आँख में सदा ही खटकता रहा और खटकता रहेगा। बड़े-बड़े बाबों ने वर्तमान में चेलियों के संग फोटो खिंचवाये, पाँव पुजवाये। महर्षि दयानन्द में यह दोष दुर्बलता आपको नहीं मिलेगी। ऋषि का एक भी ग्रुप फोटो नहीं मिलेगा जिसमें कोई महिला हो। ऋषि वह है जो भूल को भूल मानता है। सच्च कहने से डरता नहीं। आप यह शोर क्यों नहीं मचाते कि स्वामी दयानन्द बाल्यकाल में मूर्त्तिपूजक था?

- वेद सदन, अबोहर, पंजाब-१५२११६

दयानन्द धर्मार्थ चिकित्सालय

परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित ऋषि उद्यान में पिछले लगभग एक वर्ष से आयुर्वेदिक चिकित्सालय चल रहा है। चिकित्सालय में उपलब्ध सभी औषधियाँ नि:शुल्क दी जाती हैं। ऋषि उद्यान में रह रहे डॉ. रमेश मुनि जी चिकित्सक के रूप में इस चिकित्सालय का कुशलतापूर्वक कार्यभार सम्भाल रहे हैं।

दानी महानुभावों से सहयोग की भी अपेक्षा है।

१. बैंक का नाम-**भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।**

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**10158172715**

IFSC-SBIN0007959

२. बैंक का नाम-**आई.डी.बी.आई**, पावर हाऊस के सामने,

जयपुर रोड़, अजमेर।

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**091104000057530**

IFSC-IBKL0000091

email : psabhaa@gmail.com

मन्त्री, परोपकारिणी सभा, अजमेर

आस्था भजन (चैनल) पर आर्य विद्वानों के प्रवचन

स्वामी रामदेव जी जन-जन के कल्याण को ध्यान में रखते हुए वैदिक धर्म के प्रचार-प्रसार के लिए 'आस्था-भजन' चैनल पर प्रतिदिन सायं ७ से ९ बजे तक दो घण्टे के बीच वैदिक विद्वानों के प्रवचनों को प्रसारित करवा रहे हैं।

इस कार्य में परोपकारिणी सभा द्वारा भी महत्त्वपूर्ण योगदान दिया जा रहा है। परोपकारिणी सभा द्वारा प्रवचनों की आपूर्ति के लिए ऋषि उद्यान में रिकॉर्डिंग-यूनिट चल रही है और लगातार नित नये प्रवचनों की रिकॉर्डिंग की जा रही है। परोपकारिणी सभा ये प्रवचन आस्था-भजन (चैनल) को प्रदान कर रही है।

इन दिनों 'आस्था-भजन' (चैनल) पर प्रतिदिन सायं ७ से ७.२० बजे तक **आचार्य धर्मवीर** के वेद-प्रवचन, ७.३० से ७.५० तक **स्वामी विष्वङ्** के योगदर्शन प्रवचन, ८.३० से ८.५० तक **आचार्य सत्यजित्** के प्रवचन प्रसारित हो रहे हैं। इसी प्रकार आगे भी 'आस्था-भजन' पर प्रतिदिन सायं ७ से ९ बजे के बीच अन्य विद्वानों के व अन्य विषयों पर प्रवचन प्रसारित होते रहेंगे।

धर्मप्रेमी जन इन प्रवचनों का अधिकाधिक लाभ उठाएँ और अन्यों को भी अधिकाधिक सूचित करें।

'आस्था-भजन' (चैनल) डिश-टी.वी. और डी.टी.एच. पर उपलब्ध है, किन्तु टाटा-स्काई, वीडियोकोन, बिग-टी.वी. आदि पर नहीं आ रहा है। जिनके पास ये नहीं आ रहा है, वे अपने प्रसारक (सर्विस प्रोवाइडर) को बार-बार कह कर प्रेरित करते रहें, जिससे कि ये भी आस्था भजन को प्रसारित करने लगें। ऐसा करके वैदिक-धर्म के प्रचार-प्रसार में आप भी सहयोग प्रदान कर सकते हैं। जो केबल से देखते हैं, वे भी अपने केबल ऑपरेटर को कह कर आस्था भजन आरम्भ करवा सकते हैं।

युग प्रवर्तक– महर्षि दयानन्द

– सत्येन्द्र सिंह आर्य

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी का जन्म काठियावाड़ (सौराष्ट्र) में मौरवी राज्य के टंकारा ग्राम में एक सम्पन्न औदीच्य ब्राह्मण कुल में सम्वत् १८८१ विक्रमी में हुआ था। पिता का नाम करसन जी तिवाड़ी था और यह परिवार शैव मतावलम्बी था। महर्षि दयानन्द जी महाराज का बचपन का नाम मूलशंकर था। इनके दो भाई एवं दो बहन और थे परन्तु ये बहन–भाइयों में सबसे बड़े थे।

परिवार की परम्परा के अनुसार उनकी संस्कृत, व्याकरण और वेद आदि की शिक्षा–दीक्षा आरम्भ हो गयी। घर में धार्मिकता का वातावरण था। पिता शिव जी के पक्के भक्त थे। लगभग १४ वर्ष की अवस्था में मूलशंकर ने शिवरात्रि का व्रत (उपवास)रखा। इस विश्वास के प्रभाव में कि कैलाश पर्वतवासी भगवान शिव अपने उपासकों को, व्रत रखने वालों को दर्शन देते हैं, मूलशंकर शिव रात्रि के दिन मन्दिर में रात्रि समय में जागते रहे, जबकि उनके पिता, पुजारी एवं अन्य उपासकगण सो गये। मूलशंकर ने देखा कि भगवान शंकर तो दर्शन देने के लिए नहीं आए परन्तु चुहे ने अवश्य शिवपिण्डी को अपवित्र कर दिया। यह देखकर कि जो शिव एक चूहे से अपनी रक्षा नहीं कर सकता वह अपने भक्तों की मनोकामनाएँ कैसे पूर्ण करेगा, मूर्ति–पूजा की निस्सारता स्पष्ट हो गई। उनके मन में यह भाव बैठ गया कि जिस पाषाण–प्रतिमा की पूजा पुजारी–गण करते और कराते हैं, वह सच्चा शिव नहीं है। सच्चे शिव (परमेश्वर) का स्वरूप तो कुछ और ही होना चाहिए।

कुछ काल पश्चात् हैजे के रोग से उनकी बहन की अचानक मृत्यु हो गई। दो–तीन वर्ष के पश्चात् इनके चाचा, जो इन्हें बहुत प्रेम करते थे, की भी मृत्यु हो गयी। जो मूलशंकर अपनी बहन की मृत्यु पर बिल्कुल नहीं रोये थे, वे अपने चाचा की मृत्यु पर बहुत रोये। यह बात भी उनके मन में बैठ गयी कि मृत्यु अपरिहार्य है, जिसका जन्म हुआ है, उसकी मृत्यु अवश्य होगी, मूलशंकर को भी एक दिन मरना पड़ेगा।

मूर्ति–पूजा की निरर्थकता और मृत्यु की अपरिहार्यता– इन दो तथ्यों से कुमारावस्था में ही मूलशंकर को साक्षात्कार हो गया। उन्होंने मन में सोचा कि **एक** सच्चे शिव की खोज एवं **दूसरा** मृत्यु पर विजय प्राप्त करने का प्रयत्न करना चाहिए। इसी उद्देश्य से उन्होंने बीस–इक्कीस वर्ष की अवस्था में घर त्याग दिया। सत्य (यथार्थ) ज्ञान देने वाले विद्वानों एवं सच्चे योगियों का जैसे आजकल मिलना कठिन है, वैसे ही उस काल में भी कठिन था। गृह–त्याग के पश्चात् मूलशंकर की प्रथम भेंट वैरागी–साधुओं से हुई। उन लोगों ने मूलशंकर के मूल्यवान वस्त्र और आभूषण आदि ले लिए तथा उन्हें साधारण वस्त्र दे दिये। मूलशंकर को एक साधु के रूप में शुद्ध चैतन्य नाम दे दिया। अपनी ज्ञान–पिपासा की तृप्ति के लिए विद्वानों, योगियों की खोज में शुद्ध चैतन्य की सुदीर्घ यात्रा जारी रही। इस बीच स्वामी पूर्णानन्द सरस्वती से संन्यास की दीक्षा लेकर शुद्ध चैतन्य अब स्वामी दयानन्द सरस्वती बन गए।

नर्मदा, गंगा जैसी पवित्र नदियों के किनारे–किनारे भ्रमण, योगियों की खोज में तीर्थों, मठों, वनों–पर्वतों आदि का परिभ्रमण और योगाभ्यास आदि में कई वर्ष व्यतीत हो गए परन्तु कोई योग्य गुरु महर्षि दयानन्द जी को नहीं मिला। अन्त में एक वृद्ध संन्यासी से स्वामी विरजानन्द जी का पता महर्षि को मिला और वे ईसवी सन् १८६० में मथुरा में स्वामी विरजानन्द जी की कुटिया पर पहुँच कर उनके विद्यार्थी बने। लगभग तीन वर्ष में शिक्षा पूर्ण करके अज्ञानान्धकार की कोठरी में बन्द वेद ज्ञान को जानने–समझने की कुञ्जी प्राप्त कर ली। अष्टाध्यायी, महाभाष्य और निरुक्त जैसे आर्ष ग्रन्थों पर असाधारण अधिकार प्राप्त करके ही यह सम्भव हो सका। अन्त में गुरु से विदा लेने का समय आ गया। उस युग में शिक्षा नि:शुल्क हुआ करती थी। शिष्य से किसी प्रकार का मासिक या वार्षिक शुल्क नहीं लिया जाता था। शिक्षा पूर्ण होने पर गुरुकुल से विदा लेते समय ही शिष्य द्वारा अपनी सामर्थ्यानुसार गुरु जी को कुछ भेंट करने की परम्परा थी। स्वामी दयानन्द सरस्वती तो इस अवधि में अपने भोजन के लिए भी दुर्गा खत्री और अमरलाल जोशी पर निर्भर थे। अत: गुरुदक्षिणा की परम्परा के निर्वाह के लिए किसी प्रकार आधा सेर लौंग लेकर गुरु जी के सम्मुख स्वामी दयानन्द जी उपस्थित हुए। विरजानन्द जी महाराज जानते थे कि स्वामी दयानन्द संन्यासी हैं और उनके पास कुछ नहीं है। स्वामी विरजानन्द जी ने कहा– ''दयानन्द! में तुमसे कुछ और ही माँगता हूँ।

मेरे सामने यह शपथ लो कि जब तक तुम जीवित रहोगे तब तक आर्ष साहित्य और वेद-ज्ञान का प्रचार-प्रसार निरन्तर करते रहोगे और यदि आवश्यकता पड़ी तो इसके लिए अपना जीवन भी दे दोगे तथा वैदिक धर्म को पुनर्स्थापित करोगे। यही मेरी दक्षिणा होगी।'' स्वामी दयानन्द जी ने श्रद्धावनत होकर बिना किसी संकोच के ''तथास्तु'' कहकर गुरु का आदेश शिरोधार्य कर लिया।

इसके पश्चात् भी दण्डी स्वामी श्री विरजानन्द जी ५ वर्ष के लगभग जीवित रहे। ईसवी सन् १८६८ में १४ सितम्बर को उनका निधन हुआ। उनकी मृत्यु का समाचार मिलने पर स्वामी दयानन्द सरस्वती जी ने दीर्घ नि:श्वास लेकर कहा-''हा! भारतवर्ष, पवित्र आर्यावर्त! आज व्याकरण का दमकता हुआ सूर्य अस्त हो गया।'' यह है ऋषि दयानन्द की गुरु-भक्ति।

स्वामी विरजानन्द जी की महानता को कोई नकार नहीं सकता। बिना विरजानन्द के स्वामी दयानन्द का निर्माण नहीं हो सकता था और बिना दयानन्द जी के उस वेद-धर्म का पुनरुद्धार नहीं हो सकता था। जिसकी उस समय भारत की मुक्ति के लिए महती आवश्यकता थी। यदि स्वामी दयानन्द जी स्वामी विरजानन्द के शिष्य न बनते तो विरजानन्द जी एक साधारण और अप्रसिद्ध व्यक्ति के तौर पर ही संसार से जाते। और वेद-ज्ञान की कुञ्जी भी उनके साथ ही भस्मीभूत हो जाती। जो वेद ज्ञान भारतीयों की बहुमूल्य सांस्कृतिक धरोहर है और विश्व-कल्याण के लिए भी जो महत्त्वपूर्ण है, वह अज्ञात कुण्ड में दफन हो जाता। यह मानव जाति का सामान्य रूप से और भारतवासियों का विशेष रूप से सौभाग्य रहा कि स्वामी विरजानन्द जी ने वेद ज्ञान को सूक्ष्मता के साथ समझने की कुञ्जी ढूँढ ली और वह अपने सुयोग्य शिष्य स्वामी दयानन्द सरस्वती को सौंप दी जिससे वेद का पुनरुद्धार हो सका।

स्वामी विरजानन्द जी की कुटिया से विदा लेने के पश्चात् स्वामी दयानन्द सरस्वती जी लगभग दो वर्ष तक आगरा में रहे। शास्त्रों एवं वेदों का अध्ययन और योगाभ्यास करते रहे। बीच-बीच में शंका-समाधान के लिए स्वामी विरजानन्द जी के पास मथुरा भी जाते रहे। पं. सुन्दरलाल जी एवं स्वामी कैलाश पर्वत जी से मिलना और धर्मचर्चा का क्रम भी चला। भविष्य में वेद-प्रचार एवं राष्ट्रोद्धार के कार्य के लिए स्वयं को तैयार करते रहे। आर्ष ग्रन्थों के प्रचार हेतु स्वयं स्वामी विरजानन्द जी ने भी भरसक प्रयत्न किया था। इस विषय में एक घटना का उल्लेख यहाँ प्रासांगिक होगा।

स्वामी विरजानन्द उस समय सोरों के निकट गंगा के किनारे गड़िया घाट में रहते थे और पं. अंगदराम और बुद्धसेन जैसे शिष्य उनसे व्याकरण पढ़ते थे। एक दिन स्वामी विरजानन्द जी गंगा में खड़े हुए विष्णु स्तोत्र का पाठ कर रहे थे। अलवर नरेश महाराजा विनयसिंह जो वहाँ तीर्थाटन पर आए हुए थे, वह पाठ सुनकर स्वामी जी की वाणी के माधुर्य एवं उनके चेहरे की तेजस्विता से बड़े प्रभावित हुए और उनसे अलवर चलने का अनुरोध किया। स्वामी जी ने साथ जाने से इंकार कर दिया। जब महाराजा विनयसिंह ने स्वामी जी की कुटिया पर पहुँच कर पुन: आग्रह किया तो स्वामी जी इस शर्त पर उनके साथ जाने को तैयार हुए कि महाराजा विनयसिंह जी स्वामी जी से नित्य प्रति तीन घण्टे संस्कृत, व्याकरण एवं आर्ष ग्रन्थ पढेंगे। अलवर नरेश ने यह शर्त स्वीकार कर ली और उनका यह अध्ययन क्रम कई मास चला। स्वामी विरजानन्द जी के मन में यही भाव रहा होगा कि यदि स्वयं राजा को शास्त्रों का सम्यक् ज्ञान हो जाएगा तो राजा और प्रजा दोनों का सुधार हो जायेगा। स्वामी जी ने अलवर नरेश श्री विनयसिंह जी के लिए एक पुस्तक ''**शब्दबोध**'' भी लिखी। स्वामी दयानन्द सरस्वती के मथुरा आने से पहले स्वामी विरजानन्द जी अन्य राजाओं से भी मिले थे। मुरसन के राजा टीकमसिंह का आतिथ्य भी विरजानन्द जी ने स्वीकार किया था। भरतपुर के महाराजा बलवन्तसिंह (१८३५ ए.डी. से १८५३ ए.डी. तक) का आग्रह था कि स्वामी विरजानन्द जी जीवन भर उनके यहाँ रहें और विद्या का प्रचार-प्रसार करते रहें। स्वामी जी वहाँ पर भी केवल छह मास ही रहे। इससे यह बात तो स्पष्ट होती है कि उस समय राजाओं के यहाँ विद्वानों का सम्मान होता था और विद्या के प्रचार-प्रसार को वे प्रोत्साहित करते थे। बाद में स्वामी विरजानन्द जी मथुरा आ गए और वहाँ पर एक पाठशाला स्थापित कर ली। नवम्बर १८५९ में भारत के गवर्नर जनरल लार्ड केनिंग ने आगरा में एक दरबार (सभा) आयोजित किया था जिसमें राजपूताना के सभी राजाओं को बुलाया था। इस अवसर पर स्वामी विरजानन्द जी भी आगरा पहुँचे और जयपुर नरेश महाराजा रामसिंह जी से मिले और उनसे कहा, ''आप क्षत्रिय हैं, आर्ष ग्रन्थों के प्रचार में सहायता कीजिए। वेदों की उपेक्षा के कारण

भारत की दुर्दशा हुई है, पाखण्ड फैला है और धर्म के नाम पर अधर्म ने समाज को जकड़ रखा है। क्षत्रियों की सहायता के बिना धर्म की रक्षा नहीं हो सकती।'' भले ही अपेक्षित सहयोग न मिला हो परन्तु स्वामी विरजानन्द ने आर्ष-ग्रन्थों के पठन-पाठन एवं वेद-विद्या के पुनरुद्धार के लिए राजाओं से सहायता मांगी और उन्होंने स्वामी विरजानन्द की बात ध्यानपूर्वक सुनी और उनका बहुत आदर-मान किया। महर्षि दयानन्द सरस्वती जी इन्हीं प्रज्ञा-चक्षु स्वामी विरजानन्द सरस्वती के योग्यतम शिष्य थे।

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने जैसा अपने गुरु स्वामी विरजानन्द जी को वचन दिया था, उसी के अनुसार कार्य में जुट गए और अपने जीवन के १८६४ ईसवी के बाद के वर्ष देश में पूर्व से पश्चिम और उत्तर से दक्षिण तक घूम-घूमकर वेद का प्रचार करने में लगाए। सभी प्रकार के पाखण्ड, अन्धविश्वास और असत्य बातों का खण्डन किया। यह प्रतिपादित किया कि वेद ही एकमात्र ईश्वरीय ज्ञान है, इसलिए वह स्वत: प्रमाण है। अज्ञान के पोषक पुरोहितवाद और ब्राह्मणवाद का खण्डन किया। ब्राह्मणों ने धार्मिक सत्ता पर एकछत्र साम्राज्य बनाकर हिन्दुओं के जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में जो अपना अनुचित दखल बना लिया था, उसका स्वामी जी ने पुरजोर विरोध किया। किसी भी प्रकार की जड़पूजा, तीर्थों-व्रतों की मिथ्या धारणाओं, फलित ज्योतिष, पुरुषार्थ शून्य भाग्यवाद को भारत वर्ष की दुर्दशा का कारण बताया। भोली-भाली जनता की ज्ञान शून्यता, उदारता और भक्ति-भावना पर पलने वाले तथाकथित साधुओं की तीखी आलोचना की। जन्मना जातिप्रथा, छुआछूत, अस्पृश्यता और बालविवाह का खण्डन किया। स्त्री जाति की शिक्षा और उनके सम्मान की वकालत की। आर्ष ग्रन्थों के पठन-पाठन पर बल दिया। जहाँ-जहाँ महर्षि जी जाते, वहीं पर धर्म के स्वयम्भू ठेकेदार बन बैठे ब्राह्मणों को शास्त्रार्थ के लिए ललकारते और उन्हें सत्य को स्वीकार करने के लिए कहते। महर्षि दयानन्द का उद्देश्य सत्य की पहचान करना और करवाना था। जिससे असत्य से सभी को मुक्ति मिल सके। इसके लिए उन्होंने ब्राह्मणों, जैनियों, ईसाइयों और इस्लाम मतावलम्बियों से भी शास्त्रार्थ किया। धार्मिक क्षेत्र के पाखण्ड और छल-कपट की भाँति ही उन्होंने सामजिक, आर्थिक और शैक्षणिक क्षेत्रों में व्याप्त कमियों-त्रुटियों को दूर करने के लिए भी देश-वासियों को झकझोरा। गुरुकुलीय शिक्षा प्रणाली को आवश्यक बताया। शारीरिक और बौद्धिक बल की वृद्धि के लिए ब्रह्मचर्य एवं स्वाध्याय को एकमात्र उपाय माना और राष्ट्र की उन्नति का यही रास्ता है, यह भी कहा। महर्षि जी के सामने काम यह था कि देशवासियों को उनके अधोपतन की स्थिति और अज्ञान का अहसास करायें और वे पुन: आत्म-विश्वास एवं शक्ति से परिपूर्ण हो जाएँ, ऐसा उपाय करें।

जब महर्षि जी ने यह कठिन काम आरम्भ किया तो उन्होंने पाया कि वे बिल्कुल अकेले हैं और उनके सामने विरोध और आक्रामकता का विशाल पहाड़ है। कट्टरपंथी हिन्दू, धर्मान्ध मुसलमान और शासनतन्त्र पर कब्जाधारी ईसाई सभी उनके विरुद्ध संगठित हैं। विद्या की नगरी काशी के सभी पण्डित, शिक्षित-अशिक्षित सभी सन्त, महन्त, ब्राह्मण, ईसाई मिशनरियों की संगठित सेना और तलवार की भाषा के पैरोकार मुल्ला-मौलवी सभी महर्षि जी के विरुद्ध डटकर खड़े थे। अंग्रेजी पढ़े-लिखे तथाकथित नवशिक्षित भी स्वामी जी के विरोधी थे जिनके लिए योरुप और योरुपीय तो आदर्श थे परन्तु भारत तथा भारत का सबकुछ हेय था। महर्षि जी ने बड़े धैर्य के साथ इन शक्तियों का आकलन किया और अपने विद्या-बल और चारित्रिक बल से इन विरोधियों की दुर्बलताओं पर वार किया। जो पादरी और मौलवी हिन्दुओं की आलोचना करते नहीं थकते थे, उन्हें महर्षि जी ने उनके मतों की बुराईयों एवं दुर्बलताएँ बताकर निरुत्तर किया। व्याख्यानों एवं शास्त्रार्थ के साथ-साथ महर्षि जी ने ग्रन्थ लेखन एवं वेद भाष्य का भी आरम्भ किया। अप्रैल १८७५ में आर्य समाज की स्थापना हुई और उसी वर्ष सत्यार्थ-प्रकाश भी प्रकाशित हो गया। पंचमहायज्ञविधि, गोकरुणानिधि, आर्योद्देश्यरत्नमाला, व्यवहारभानु, आर्याभिविनय जैसे लघु आकार के परन्तु अत्यन्त महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ भी लिखे और ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका और वेदभाष्य जैसे बड़े ग्रन्थों का प्रणयन भी किया। आर्यजाति को संगठित करने के लिए और उसकी दुर्बलताओं को दूर करने के लिए अपने संवाद एवं सम्पर्क का दायरा निरन्तर बढ़ाया। महर्षि जी को पूर्ण विश्वास था कि आर्यजाति अपना पुराना गौरव और सम्मान पुन: प्राप्त कर सकती है।

इस कार्य के लिए महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने जो बहु-आयामी प्रयत्न किए, उनमें तत्कालीन राजाओं के साथ सम्पर्क स्थापित करना भी था। अपने राज्य में सुरक्षा, सुव्यवस्था, राज-संचालन, न्याय प्रणाली विषयक अधिकार

राजा को प्राप्त होते हैं। अत: राजा यदि सुधार करना चाहे तो राज्यभर में सुधार भी हो सकते हैं, यह एक सामान्य सी बात है। ईसवी सन् जून १८६५ में महर्षि जी करौली (राजस्थान) आए और भद्रावती नदी के किनारे राजा गोपालसिंह के बाग में अपना डेरा लगाया। महाराजा ने महर्षि जी के आवास एवं भोजन की व्यवस्था कर दी। महर्षि जी की एवं महाराजा की कई बार भेंट हुई। महर्षि जी उस समय के प्रचलित धार्मिक विचारों के विरुद्ध उपदेश करते थे। अत: पण्डित समुदाय की ओर से शास्त्रार्थ की सुगबुगाहट हुई परन्तु कोई पण्डित सामने नहीं आया। एक दिन किसी धार्मिक अनुष्ठान में महाराजा को संकल्प दिलाते हुए पं. मनीराम ने एक शब्द का अशुद्ध उच्चारण किया तो महर्षि जी ने महाराजा को कहा कि आपके पण्डितों को भाषा एवं शास्त्रों का ज्ञान नहीं है।

अक्टूबर १८६५ ईसवी में महर्षि जी जयपुर पधारे। वहाँ के पण्डितों के साथ महर्षि जी का महाभाष्य (व्याकरण ग्रन्थ) की प्रामाणिकता पर शास्त्रार्थ हुआ जिसमें प्रतिपक्षी पण्डित निरुत्तर हो गये। अचरौल के ठाकुर रंजीतसिंह जयपुर आने वाले संन्यासियों से प्राय: मिलते रहते थे। बीकानेर के ठाकुर हिम्मतसिंह से महर्षि दयानन्द सरस्वती की आगाध विद्या और सत्यधर्म की सम्यक् जानकारी की सूचना मिलने पर ठाकुर रंजीतसिंह ने महर्षि जी को अपने गृह पर भोजन के लिए सादर आमन्त्रित किया। मदनपुरा (जयपुर) में अपने उद्यान में महर्षि जी के आवास के लिए ठाकुर रंजीतसिंह ने एक भवन बनवा दिया। उनके बड़े पुत्र लक्ष्मणसिंह ने स्वामी जी से गीता पढ़ी। स्वयं ठाकुर साहब ने महर्षि जी से छान्दोग्य और बृहदारण्यकोपनिषद् पर उनके उपदेश सुने।

दिसम्बर १८७६ में महर्षि जी कर्णवास और छलेसर गए जहाँ ठाकुर मुकन्दसिंह और ठाकुर भोपालसिंह ने उनका स्वागत किया। सात वर्ष पूर्व स्वामी जी ने वहाँ पर एक संस्कृत पाठशाला स्थापित की थी जिसका सारा व्यय ठाकुर मुकन्दसिंह वहन करते थे। पाठशाला में वैदिक सिद्धान्तों का प्रतिपादन नहीं हो रहा था, इसलिए स्वामी जी ने वह पाठशाला बन्द करवा दी। ठाकुर मुकन्दसिंह और ठाकुर भोपालसिंह ने महर्षि दयानन्द सरस्वती एवं उनके मिशन की अन्तिम समय तक बहुत सेवा की।

जनवरी १८७७ ईसवी में अंग्रेज सरकार ने दिल्ली में एक दरबार लगाया था जिसमें इंग्लैण्ड की महारानी को भारत की साम्राज्ञी घोषित करना था। भारत में अंग्रेज गवर्नर जनरल, गवर्नर, लैफ्टीनैण्ट गवर्नर के अतिरिक्त भारतीय रियासतों के राजा-महाराजा भी इसमें सम्मिलित हुए थे। कर्णवास से ठाकुर मुकन्दसिंह, गोपालसिंह , भोपाल (भूपाल) सिंह, किशनसिंह आदि जो स्वामी जी के भक्त थे, इस अवसर पर दिल्ली आये थे। जहाँ दिल्ली में महर्षि जी का कैम्प लगा था, वहीं पर जम्मू-कश्मीर के महाराजा रणवीरसिंह का कैम्प था। महाराजा महर्षि जी से मिलना चाहते थे परन्तु उनके पण्डितों ने महाराजा को महर्षि जी से नहीं मिलने दिया। इन्दौर के महाराजा तुकोजीराव होल्कर महर्षि जी से मिले थे। अवध के ताल्लुकेदार महर्षि जी से मिलने नित्य प्रति आते थे। जम्मू-कश्मीर रियासत के पण्डित गणेश शास्त्री ने फरवरी १८८७ में महर्षि जी के जीवन-चरित के लेखक पं. लेखराम को बताया कि उसने अपने महाराजा को दिल्ली में महर्षि जी से मिलने नहीं जाने दिया था और बाद में जब महर्षि जी लाहौर गये तो महाराजा कश्मीर उन्हें अपनी राजधानी श्रीनगर बुलाना चाहते थे, तब भी उसने महाराजा को ऐसा न करने के लिए कपटपूर्वक रोका था। बाद में इसी पण्डित ने कश्मीर के महाराजा प्रतापसिंह को स्वयं कहा था कि वेद में मूर्ति पूजा का विधान नहीं है। महर्षि जी की हार्दिक इच्छा थी कि भारत के राजा-महाराजा एकत्र हों और महर्षि जी के प्रवचन सुनें। महाराजा होल्कर ने सब महाराजाओं को एतदर्थ एकत्र करने का वचन दिया था। परन्तु वे ऐसा नहीं कर पाये और महर्षि जी का प्रयत्न सफल नहीं हो सका। इस अवसर पर दिल्ली में प्रवास के दौरान डुमराँव के महाराजा महर्षि जी से मिलकर अपनी शंकाओं के समाधान के लिए प्राय: आते रहते थे।

मसूदा (राजस्थान) के राव साहिब बहादुरसिंह जी महर्षि जी के निष्ठावान अनुयायी बन गए। उनके निमन्त्रण पर महर्षि जी २ दिसम्बर१८७८ को मसूदा गये और रामबाग में ठहरे। राव साहिब का महर्षि जी के साथ इतना लगाव था कि वे पूरा दिन महर्षि जी के साथ बिता देते थे।

दिल्ली दरबार के समय में रिवाड़ी के प्रमुख जमींदार राव युधिष्ठिरसिंह जी महर्षि जी से प्राय: मिलते रहते थे, उनका बहुत आदर करते थे और उन्हें बहुत बार रिवाड़ी आमन्त्रित किया। महर्षि जी के रिवाड़ी आने पर राव साहिब ने उनका बहुत स्वागत किया और नगर के बाहर लाला की बारादरी नाम के अपने उद्यान में उनके आवास की

सुव्यवस्था की। वहाँ पर महर्षि जी ने मूर्तिपूजा, श्राद्ध, वेद, मुक्ति और पुनर्विवाह आदि विषयों पर व्याख्यान किये।

ईसवी सन १८७९ की प्रथम तिमाही में महाराजा कश्मीर ने अपने एक संदेशवाहक के माध्यम से महर्षि जी को पत्र भेजकर यह पूछा कि क्या शास्त्रों की ऐसी अनुमति है कि धर्मान्तरित हो गए मुस्लिमों एवं ईसाइयों को क्या शुद्ध किया जा सकता है? स्वामीजी ने कहा कि हाँ, ऐसा हो सकता है और सन्देशवाहक को कहा पुनः आकर एतद्विषयक उत्तर ले जाना।

जून १८८१ में जब मसूदा के राव बहादुरसिंह जी को पता लगा कि महर्षि जी अजमेर आए हैं तो राव महोदय ने एक व्यक्ति भेजकर महर्षि जी को मसूदा आमन्त्रित किया। महर्षि जी ने उनका निमन्त्रण स्वीकार किया और २३ जून १८८१ को वे मसूदा पहुँच गए और राम बाग पैविलियन में ठहरे और महल के किले में व्याख्यान किए। यहीं पर महर्षि जी की पादरी शूलब्रैड से धर्म चर्चा हुई। पादरी के भारतीय शिष्य बिहारीलाल के साथ राव बहादुरसिंह की धर्म चर्चा हुई जिसमें पादरी निरुत्तर हो गया। राव बहादुरसिंह जी ने जैन साधुओं के साथ भी महर्षि की धर्म चर्चा करानी चाही परन्तु वे कुछ न कुछ बहाना बनाकर सामने आने से बचते रहे। पादरी शूलब्रैड ने जो जो प्रश्न स्वामी जी से पूछे, महर्षि जी ने उनका उत्तर दिया।

राव बहादुरसिंह जी चाहते थे कि महर्षि जी मसूदा में ही रहें। उनके वेद भाष्य के प्रकाशन में सहयोग किया जाएगा। उधर रायपुर (मारवाड़) के ठाकुर हरिसिंह का बार-बार पत्र द्वारा महर्षि जी को बुलावा आ रहा था। महर्षि जी ने कहा कि साधु को एक स्थान पर लम्बे समय तक नहीं रहना चाहिए। इस प्रकार राव साहब ने महर्षि जी को वेद भाष्य के लिए ४००/-(चार सौ रुपये) देकर बहुत आदर के साथ विदा किया और ५ मील की दूरी तक महर्षि जी के साथ उन्हें छोड़ने के लिए गए। मसूदा में महर्षि जी ने दो बड़े यज्ञ कराये जिनमें ४८ लोगों को यज्ञोपवीत दिया गया।

रायपुर पहुँचने पर महर्षि जी का ठाकुर हरिसिंह एवं अन्य प्रतिष्ठितजनों ने एक स्वर्ण मुद्रा और पाँच रुपये देकर सम्मान किया। स्वामी जी के व्याख्यान तो वहाँ होते रहे परन्तु कोई बड़ा यज्ञ वहाँ नहीं हुआ।

बनेरा के राजा गोविन्दसिंह जी ने स्वामी जी को अपने यहाँ आमन्त्रित किया। बनेरा नरेश मसूदा के राव साहिब के मामा थे। बनेरा जाते समय महर्षि जी कुछ समय रुपाहेली भी रुके, जहाँ ठाकुर लालसिंह ने उनसे भेंट की और नवीन वेदान्त पर चर्चा की। १० अक्टूबर १८८१ को महर्षि जी बनेरा पहुँचे। राजा गोविन्दसिंह ने महर्षि जी का हार्दिक स्वागत किया। लगभग दो सप्ताह महर्षि जी बनेरा में रहे और उनके व्याख्यान हुए। राजा गोविन्दसिंह ने जीव एवं परमात्मा विषयक अपनी बहुत सी शंकाओं का महर्षि जी से समाधान किया।

बनेरा से महर्षि जी चित्तौडगढ़ पहुँचे। समाचार पत्रों में महर्षि जी की प्रशंसा पढ़-पढ़कर कविराजा श्यामलदास महर्षि जी के भक्त बन गये थे। मोहनलाल विष्णुलाल पण्डया ने महर्षि जी के ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश की प्रति मेवाड़ के महाराणा सज्जनसिंह को दे दी थी और वे भी महर्षि जी से मिलना चाहते थे। २७ अक्टूबर को स्वामी जी चित्तौड पहुँचे। कविराजा श्यामलदास ने गम्भीरी नदी के किनारे महर्षि जी के आवास की व्यवस्था कर दी। जागीरदार, सरदार एवं अन्य राज्याधिकारी महर्षि जी से भेंट करने के लिए आए। शाहपुराधीश महाराजाधिराज नाहर सिंह जी ने भी महर्षि जी से भेंट की। महाराणा सज्जनसिंह जी ने एक दिन महर्षि जी को आमन्त्रित किया। महर्षि जी ने राजनीति पर व्याख्यान किया और राजाओं द्वारा वेश्यागमन के दुष्परिणामों पर भी प्रकाश डाला। महर्षि जी के निर्भयतापूर्वक व्याख्यान पर महाराणा बहुत प्रसन्न हुए। महाराणा ने अपने सरदारों से कहा कि महर्षि जी ऐसे एकमात्र व्यक्ति हैं जो निर्भय होकर सत्परामर्श दे सकते हैं। महाराणा साहब महर्षि जी के भक्त बन गए। चित्तौड़ से महर्षि जी को विदा करते समय महाराणा ने महर्षि जी को ५००/- (पाँच सौ रुपये) भेंट किए, अन्य दरबारियों ने भी २००/- (दो सौ रुपये) भेंट किए। महर्षि जी चित्तौड़ में लगभग डेढ़ माह रुके थे। चित्तौड़ से मुम्बई जाते समय महर्षि जी महाराणा को कहकर गए थे कि वहाँ से लौटकर उदयपुर आयेंगे।

मुम्बई के दौरे के पश्चात् महर्षि जी ११ अगस्त १८८२ को उदयपुर आये। चित्तौड़ से निम्बाहेड़ा होते हुए यहाँ तक आने की सारी व्यवस्था महाराणा सज्जनसिंह जी ने राज्य की ओर से करा दी थी। महर्षि जी से मिलने के लिए महाराणा अगले दिन पहुँचे और उसके पश्चात् नित्यप्रति ही महर्षि जी से भेंट करते रहे- एक दिन प्रातःकाल के समय एवं अगले दिन अपराह्न में। महर्षि जी को सज्जन निवास उद्यान के नौलखा महल में ठहराया गया था। महाराणा जी को महर्षि जी ने संस्कृत एवं मनुस्मृति के ७वाँ, ८वाँ, और ९वाँ अध्याय पढ़ाए। उन्होंने उदयपुराधीश को महाभारत

के उद्योग और वन पर्व के वे श्लोक भी पढ़ाए जो राजनीति और चरित्र निर्माण से सम्बन्धित हैं। छहों दर्शनों के कुछ भाग, विदुरनीति एवं राजनीति सम्बन्धी कुछ अन्य पुस्तकें भी महाराणा को पढ़ाई। महर्षि जी ने यह परामर्श भी दिया कि न्यायालय की भाषा हिन्दी और लिपि देवनागरी होनी चाहिए।

मार्च १८८३ में महाराजाधिराज नाहरसिंह जी के निमन्त्रण पर महर्षि जी शाहपुरा पहुँचे। राज्य-उद्यान में महर्षि जी के आवास की व्यवस्था की गयी। महर्षि जी १ मार्च को वहाँ पहुँचे और उसी दिन शाहपुराधीश महाराजाधिराज नाहरसिंह जी महर्षि जी से भेंट करने के लिए वहाँ उपस्थित हो गये। महर्षि जी के साथ २ घण्टे तक धर्मचर्चा की। प्रतिदिन सायंकाल के समय महाराजाधिराज महर्षि जी से २ घण्टे शास्त्रों एवं मनुस्मृति आदि का अध्ययन करते थे। महर्षि जो दो माह से कुछ दिन मसूदा में रुके। व्याख्यानों, शंका समाधान आदि के साथ-साथ महर्षि जी वेदभाष्य भी करते रहे।

अपने उदयपुर प्रवास के दौरान ही महर्षि जी ने परोपकारिणी सभा का गठन करके २७ फरवरी १८८३ को मेवाड़ राज्य की महद्राज सभा द्वारा इसे पंजीकृत करा दिया था। महाराणा सज्जनसिंह को इस सभा का अध्यक्ष एवं कविराजा श्यामलदास को मन्त्री बनाया गया था। सभा में पदाधिकारियों एवं सदस्यों की कुल संख्या २३ रखी गयी थी। शाहपुराधीश राजाधिराज नाहरसिंह जी, राव तख्तसिंह जी वर्मा, देलवाड़ा के राणा श्री फतहसिंह जी वर्मा, असिन्द के रावल अर्जुनसिंह जी वर्मा, उदयपुर के महाराज श्री गजसिंह वर्मा और मसूदा के राव श्री बहादुरसिंह जी वर्मा इस सभा में सदस्य थे।

वेद प्रचार एवं समाज सुधार के अपने अनवरत प्रयास के क्रम में महर्षि जी ३१ मई १८८३ को जोधपुर पहुँचे। उदयपुर के महाराणा सज्जनसिंह, शाहपुराधीश नाहरसिंह जी एवं अजमेर के कुछ शुभ चिन्तकों ने महर्षि जी को जोधपुर न जाने का परामर्श दिया था। परन्तु महर्षि जी वहाँ गए। महाराजा कर्नल प्रतापसिंह और राव राजा तेजसिंह ने वहाँ पर महर्षि जी का स्वागत किया। जोधपुर नरेश महाराजा जसवन्तसिंह तो २७ दिन पश्चात् महर्षि जी को मिलने आए। महर्षि जी सत्य और सदाचार के प्रति आग्रही थे। वेश्यागमन आदि की निन्दा करना ही महर्षि जी की मृत्यु का कारण बना। महाराजा जसवन्तसिंह को महर्षि जी आमने-सामने बैठकर उपदेश दे पाते, जैसा कि उदयपुर, शाहपुरा और मसूदा के साथ हो सका था, ऐसा अवसर ही नहीं आ पाया, तथापि महर्षि जी ने भावपूर्ण पत्र लिखकर राजा प्रतापसिंह को उनके हित और कल्याण का उपदेश किया। पत्र में महर्षि जी ने लिखा- ''मैं चाहता हूँ कि आप मेरी बातों की ओर ध्यान दें और अपना आचरण सुधारें जिससे आप अपने अच्छे कार्यों से केवल मारवाड़ में ही नहीं बल्कि समूचे आर्यावर्त (भारत) में यशस्वी हो जाओ। आप जैसे सामर्थ्यवान् लोग संसार में कम ही होते हैं और उन्हें लम्बा जीवन भी कम ही मिलता है। ऐसे लोगों के अभाव के कारण राष्ट्र की समृद्धि नहीं बढ़ती। अच्छे लोग जितना दीर्घ जीवन जीते हैं, उतना ही अधिक लाभ राष्ट्र को होता है। आपको इस बात की ओर ध्यान देना चाहिए।''

महर्षि दयानन्द जी महाराज आर्य जाति का हित सुनिश्चित करने के लिए अपने समय के प्रतिष्ठित राजाओं से मिले। वेद प्रचार और समाज सुधार के कार्यों में उनसे सहयोग चाहा। उदयपुर, मसूदा, शाहपुरा आदि रियासतों के राजाओं ने महर्षि की बातों को सुना, समझा और सहयोग भी दिया। यदि महर्षि जी कुछ समय और जीवित रहते तो सम्भव था कि अन्य राजा भी उनके सम्पर्क में आते और आर्य जाति के कल्याण में, समाज सुधार, अन्धविश्वासों के निराकरण एवं कुरीतियों, पाखण्डों को दूर करने में महर्षि जी का एवं उनके द्वारा स्थापित संस्थाओं (परोपकारिणी सभा तथा आर्य समाज) के कार्यों में सहयोग करते।

-मेरठ, उ.प्र.

अतिथि यज्ञ के होताओं से अनुरोध

अतिथि यज्ञ के होताओं से उनकी वैवाहिक वर्षगांठ अथवा जन्मदिन व विभिन्न अवसरों पर ५१०० रु. प्रतिवर्ष सभा को प्राप्त होते रहते हैं। जो महानुभाव संकल्प के साथ इस पुनीत कार्य से जुड़े हुए हैं, उनसे हमारा अनुरोध है कि वे अपनी राशि भेजते समय जन्म तिथि/वैवाहिक वर्षगांठ आदि व दूरभाष संख्या सूचित करना न भूलें। साथ ही यह भी अवश्य सूचित करा देवें कि पहले से भिजवा रहे हैं अथवा नया शुरू किया है। आप अपनी राशि सभा के बैंक खाते में नगद अथवा चैक द्वारा जमा करा सकते हैं।

वैदिक पुस्तकालय के प्रकाशन

महर्षि दयानन्द सरस्वती कृत

वेदभाष्य, वेदभाषाभाष्य, मूलवेद, वेदांगप्रकाश और वैदिक साहित्य

पिछले अंक का शेष भाग.....

क्रमांक	नाम पुस्तक	मूल्य
८८.	सौवर	५.००
८९.	पारिभाषिक	२०.००
९०.	धातुपाठ	
९१.	गणपाठ	२०.००
९२.	उणादिकोष	
९३.	निघण्टु	१५.००
९४.	संस्कृतवाक्यप्रबोध	
९५.	व्यवहारभानुः	१२.००
९६.	निरुक्त (मूल)	८०.००
९७.	अष्टाध्यायी (मूल)	२०.००
९८.	अष्टाध्यायीभाष्य प्रथम भाग सजिल्द	१२०.००
९९.	अष्टाध्यायी भाष्य द्वितीय भाग सजिल्द	१००.००
१००.	अष्टाध्यायी भाष्य तृतीय भाग सजिल्द	१३०.००

डॉ. भवानीलाल भारतीय

१०१.	महर्षि दयानन्द– आत्मकथा	
१०२.	उपदेश मंजरी (पूना प्रवचन)	
१०३.	परोपकारिणी सभा का इतिहास	
१०४.	आर्यसमाज के पत्र और पत्रकार	१०.००
१०५.	आर्य नरेश राजाधिराज सर नाहरसिंह वर्मा	८.००
१०६.	दयानन्द–सूक्ति–मुक्तावली	१५.००
१०७.	देशभक्त कुँ.चाँदकरण शारदा	५.००
१०८.	दयानन्द वचनामृत	३.००
१०९.	आर्यसमाज के शास्त्रार्थ महारथी	१०.००

वेदगोष्ठी– सम्पादक डॉ. धर्मवीर

११०.	ऋषि दयानन्द की वेदभाष्य शैली	२०.००
१११.	वेद और कर्मकाण्डीय विनियोग	३१.००
११२.	अथर्ववेदः समस्याएं और समाधान	३५.००
११३.	वेद और विदेशी विद्वान् – कृतित्व और दृष्टिभेद	३५.००
११४.	वेदों के आख्यान (प्रथम भाग)	३५.००
११५.	वेदों के दार्शनिक विचार	४०.००
११६.	सोम का वैदिक स्वरुप	५०.००
११७.	पर्यावरण का वैदिक स्वरुप	
११८.	वेद और समाज	
११९.	वेद और राष्ट्र	
१२०.	वेद और विज्ञान	
१२१.	वेद और ज्योतिष	८०.००
१२२.	वेदों में पदार्थ विद्या (विशेषांक–१)	५०.००
१२३.	वेदों में पदार्थ विद्या (विशेषांक–२)	५०.००
१२४.	वेद और निरुक्त	१००.००
१२५.	वेद और इतिहास	१००.००
१२६.	वेद में कृषि व वनस्पति विज्ञान	१००.००
१२७.	वेद और शिल्प	
१२८.	वेदों में अध्यात्म	
१२९.	वेदों में राजनैतिक विचार	१००.००
१३०.	वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है	
१३१.	वैदिक समाज विज्ञान	
१३२.	सत्यार्थ प्रकाश ७वाँ समुल्लास और वेद	
१३३.	सत्यार्थ प्रकाश ८वाँ समुल्लास और वेद	

प्रो. धर्मवीर

१३४.	आर्यसमाज और शोध	१५.००
१३५.	महर्षि दयानन्द सरस्वती के पत्र	

क्रमांक	नाम पुस्तक	मूल्य
	स्वामी विष्वङ् परिव्राजक	
१३६.	ध्यान योग एवं रोग निवारण	१५०.००
१३७.	योग	५०.००
१३८.	अष्टाङ्ग योग	२०.००
१३९.	समाधि	१००.००
	स्वामी अभयानन्द सरस्वती	
१४०.	प्राणायाम चिकित्सा	
	डॉ. सत्यदेव आर्य	
१४१.	वैदिक सन्ध्या मीमांसा	२५.००
१४२.	ईश्वरस्तुतिप्रार्थनोपासना मन्त्रों का विवेचन	२५.००
१४३.	तन्मेमनःशिवसंकल्पमस्तु का वैज्ञानिक विवेचन	२५.००
	विरजानन्द दैवकरणि	
१४४.	प्राचीन भारतीय इतिहास के स्रोत	८.००
१४५.	महाभारत युद्ध कब हुआ एवं अन्य रचनाएँ	५.००
	वैद्य पंडित ब्रह्मानन्द त्रिपाठी	
१४६.	बूंदी शास्त्रार्थ	५.००
१४७.	वैदिक सूक्ति–सुमन	२५.००
	वैदिक साहित्य – विविध ग्रन्थ	
१४८.	दयानन्द ग्रन्थमाला तीन खंड का १ सेट	५५०.००
१४९.	आर्य समाज की मान्यताएं	२०.००
१५०.	मानव निर्माण के स्वर्ण सूत्र	१५.००
१५१.	अथर्ववेदीय पञ्चपटलिका (सजिल्द)	२५.००
१५२.	अथर्ववेदीय पञ्चपटलिका अजिल्द	१५.००
१५३.	ऋग्वेद का नमूना भाष्य (१मंत्र)	४.००
१५४.	ईशादिदशोपनिषद् (मूल)	१०.००
१५५.	वैदिक कोषः (निघण्टु मणिमाला)	२५.००
१५६.	सरस्वती की खोज एवं महाभारत युद्धकाल	१०.००
१५७.	दयानन्द दिव्य दर्शन	१२.००
१५८.	वृक्षों में जीवात्मा	१०.००

क्रमांक	नाम पुस्तक	मूल्य
१५९.	महर्षि दयानन्द जीवन और सन्देश	३.००
१६०.	महर्षि महिमा	२.००
१६१.	स्वामी दयानन्द चरितम्	१०.००
१६२.	ब्रह्माकुमारी मत खण्डन	८.००
१६३.	निरुक्तकार का ऐतिहासिक पक्ष	५.००
१६४.	मांसाहार– वैदिक धर्म एवं विज्ञान	१२.००
१६५.	नेपाली सत्यार्थ प्रकाश	२००.००
१६६.	परोपकारी विशेषांक	२५.००
१६७.	महर्षि दयानन्द के चित्र (एक प्रति)	५०.००
१६८.	संगठन सूक्त	२.००
१६९.	३१ दिवसीय टेबल कलेण्डर	१००.००
१७०.	प्यारा ऋषि	२५.००
१७१.	नककटा चोर	३०.००
१७२.	महर्षि दयानन्द और उनके अनुयायी	३५.००
१७३.	स्वामी दयानन्द सरस्वती और उनके क्रान्तिकारी शिष्य	३५.००
१७४.	भगवान् को क्यों मानें ?	२५.००
१७५.	महर्षि दयानन्द ग्रन्थ परिचय	३०.००
१७६.	आर्यसमाज के संस्थापक, महान समाज सुधारक–महर्षि दयानन्द सरस्वती	२५.००
१७७.	शेख चिल्ली और लाल बुझक्कड़	२५.००
१७८.	नैति मंजूषा	९५०.००
१७९.	ऋग्वेदादि संदेश	३०.००
१८०.	त्याग की धरोहर	१००.००
	ध्यान योग एवं रोग निवारण (सी.डी.)	
	(स्वामी विष्वङ् परिव्राजक)	
१८१.	अष्टांग योग–१ (सी.डी.)	
१८२.	अष्टांग योग–२ (सी.डी.)	
१८३.	आसन (सी.डी.)	
१८४.	सूक्ष्म व्यायाम (सी.डी.)	

शेष भाग अगले अंक में.....

ऊमर काव्य

- ऊमरदान लालस

राजस्थान के गौरव राजस्थानी भाषा के कवि उमरदान जी का अमर काव्य हमें परोपकारिणी सभा के सम्माननीय सदस्य डॉ. खेतलखानी जी की कृपा से प्राप्त हुआ। इस पुस्तक का तीसरा संस्करण १९३० में प्रकाशित हुआ था। इसमें उमरदान जी की अनेक रचनाओं का संग्रह है। इस पुस्तक के पृष्ठ संख्या ६० से ९४ तक 'दयानन्द री दया' नाम से उनकी रचना प्रकाशित है। कवि और काव्य दोनों ही महत्त्वपूर्ण होने से पाठकों के लाभार्थ दयानन्द दर्शन को प्रकाशित कर रहे हैं। यह एक इतिहास का भाग है। पाठक लाभ उठा सकेंगे। **- सम्पादक**

पिछले अंक का शेष.....

(२३)

भी दन्ती सकार (स) ही लिखा व बोला जाता है। ऐसे ही 'ख' के स्थान में 'ष' लिखा जाता है। इसका साहित्य विक्रम की ६वीं शताब्दी से मिलता है। ऐसी डिंगल भाषा में जिसे अनघड़ पत्थर या मिट्टी के ढेले की उपमा दी गई हो काव्य निर्माण और वह भी हृदयग्राही सरस काव्य हो, यह कवि की प्रतिभा का प्रत्यक्ष प्रमाण है।

यों तो डिंगल भाषा में, जो मारवाड़ी भाषा की जननी है सभी रसों का वर्णन कुशल कवि बखूबी कर सकता है—कवियों ने सभी रसों का वर्णन अपनी अपनी रचनाओं में यथा स्थान किया भी है। दादूदयाल, गरीबदास, शंकरदास, और सुन्दरदास आदि महात्माओं ने अपनी अपनी वाणियों को मारवाड़ी भाषा में ही लिखा है; परन्तु उनके काव्य-ग्रन्थ, अपने पन्थों और मतों के भावों से ही पूरित हैं। राजिया और किसनिया के सोरठे तथा दोहे मारवाड़ी भाषा के उज्वल रत्न हैं। इनके अतिरिक्त मारवाड़ी कहावतें भी कुछ कम रोचक नहीं होतीं। तथापि यदि हम काव्य की कसौटी पर प्रस्तुत "ऊमर काव्य" को कस कर देखें तो उत्तम काव्यों की गणना में यह भी आ सकता है।

इस काव्य में डिंगल भाषा का माधुर्य और वीर शृंगार, हास्य, आदि रसों का समूह तथा उपदेश सभी स्पष्ट दिखाई देते हैं। इसमें जो सामाजिक सुधार और आलोचना की मीठी चुटकी दीख पड़ती है, वह भारतीय-राष्ट्र निर्माता स्वामी दयानन्द सरस्वती के सत्संग का ही प्रभाव है। मारवाड़ी भाषा स्वयं ही श्रुतिमधुर है, परन्तु कवि ने उसमें व्यंग और हास्य का संमिश्रण कर के उसे और भी विशेष रोचक कर दिया है।

एक साधारण कुल में जन्म लेकर कवि ऊमरदान ने अपना नाम इस काव्य द्वारा साहित्य-संसार में अमर कर दिया। देखिये कवि स्वयं अपने विषय में कह रहा है—

मुलक मारवाड़ में थली के मद्ध जन्म जोय,
चारन बरन चारु बिकल विसासी को।
बाल वय में ही पितुमात परलोक बसे,
भ्रात नवलेस भयो हुयो खेल हांसी को।
रांडां के सनेही गुरु मुखिया मुरार मिल्यो,
धणी श्रीप्रताप धारयो अंकुर उदासी को।
सुख को न किहिनों सोच लख उमरेस लिहिनो,
देव सब दिहिनों सराजाँम सत्यानासी को।

कैसी स्पष्टोक्ति है। कवि के शुद्ध हृदय का परिचय मिल जाता है। कवि जी के पास, घमण्ड या अहंभाव तो फटका तक नहीं था। देखिये एक जगह वे अपने विषय में फिर लिखते हैं:—

"जोगी कहो भव भोगी कहो,
रजयोगी कहौ कौ केसेइ हैं।
न्यायी कहो अन्यायी कहो,
कुकसाई कहौ जग जैसेइ हैं॥
मीत कहो वो अमीत कहो,
ज्युँ पलीत कहौ तन तैसेइ हैं।
ऊत कहो, अवधूत कहो,
लो कपूत कहो हम हैं सोइ हैं॥

कवि के काव्य को पढ़ने पर उनके स्वभाव एवं सिद्धान्तों का पाठक को पूर्ण ज्ञान हो जाता है। एक बात हम पाठकों को कवि के विषय में और बतला देना चाहते हैं। यद्यपि काव्य में उनके शब्द प्रयोगों से सुज्ञ पाठक अनुमान लगा सकेंगे तथापि हम सूचित कर देना चाहते हैं, कि ऊमरदान जी साधारण अंग्रेजी भी जानते थे। वे अपनी १६-२० वर्ष की उम्र में अंगरेजी पढ़ने के लिये जोधपुर हाई-स्कूल में भरती हुये थे और

बड़े ही परिश्रम से चौथे पाँचवें दर्जे तक उन्होंने अंगरेजी सीखी थी, बाद में अभ्यास द्वारा उन्होंने अपना ज्ञान और बढ़ा लिया था।

कवि ऊमरदानजी का स्वर्गवास उनकी ५१ वर्ष की अवस्था में मिती फाल्गुन सुदि १३ संवत् १९६० विक्रमी (ता० ११-३-१९०३) को जोधपुर में हुआ। उनके स्वर्गवास पर विद्याव्यसनी एवं काव्यमर्मज्ञ पुरुषों को अपार दुःख हुआ। एक कवि ने दुखी होकर आपके स्वर्गवास पर कहा था—

"हमें निपट अलगो हुवो, लालस नेह लगाय।
कागा[1] बिच डेरा किया, जागा अबकी[2] जाय।
विद्या कविता वीरता, ऊमर तो उपदेश।
एकण हाँ फिर आवज्यो, देखै मरुधर देस।

इनके पिता का शुभनाम बारहठ बख्शीराम और दादा का मेघराज जी था। ऊमरदान का जन्म परगना फलोधी (मारवाड़) के गांव ढाढरवाड़ा में सं० १९०८ वि० की वैशाख सुदि २ शनिवार को हुआ था। यह तीन भाई थे, बड़े

१—जोधपुर शहर की एक श्मशान भूमि का नाम।
२—अगम, जहाँ कोई सशरीर न जा सके। कठिन।

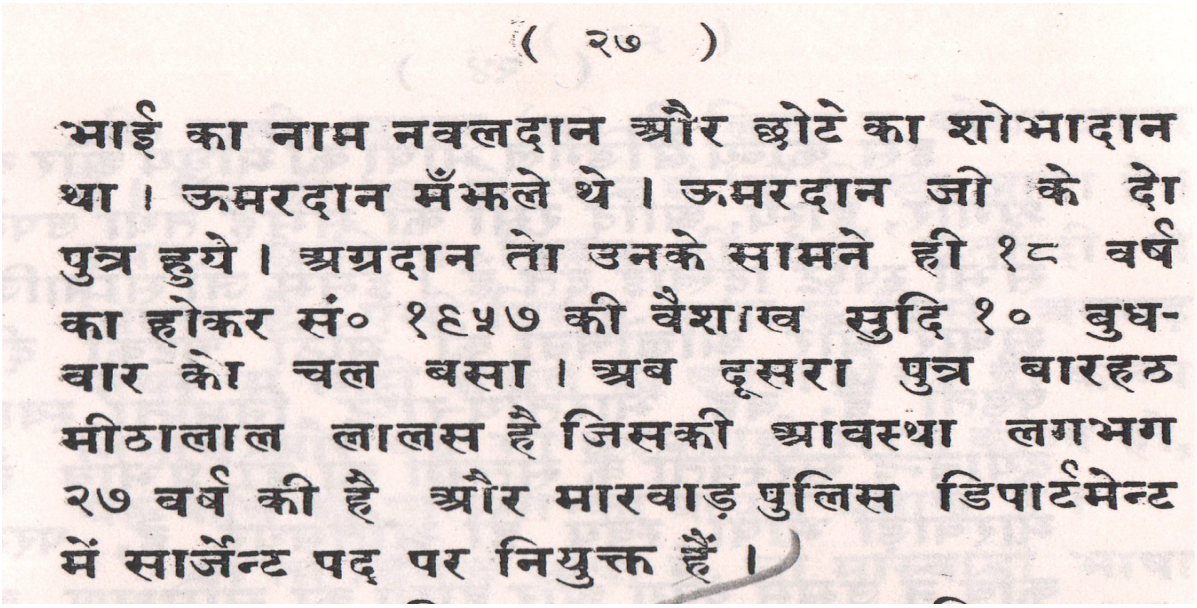
(२७)

भाई का नाम नवलदान और छोटे का शोभादान था। ऊमरदान मँझले थे। ऊमरदान जी के दो पुत्र हुये। अग्रदान तो उनके सामने ही १८ वर्ष का होकर सं० १९५७ की वैशाख सुदि १० बुधवार को चल बसा। अब दूसरा पुत्र बारहठ मीठालाल लालस है जिसकी आवस्था लगभग २७ वर्ष की है और मारवाड़ पुलिस डिपार्टमेन्ट में सार्जेन्ट पद पर नियुक्त हैं।

शेष भाग अगले अंक में.....

सत्यार्थ प्रकाश का प्रचार प्रसार

गत विश्व पुस्तक मेले में सभा द्वारा पांच हजार सत्यार्थप्रकाश (हिन्दी), दो हजार सत्यार्थप्रकाश (अंग्रेजी), ऋषि दयानन्द की जीवनी पाँच हजार, दो हजार सी.डी. का नि:शुल्क वितरण किया। जिसकी सज्जनों द्वारा बहुत प्रशंसा की गई। अब सज्जनों का फिर उसी प्रकार के कार्यक्रम की मांग कर रहे हैं।

इस बार सभा ने कार्यक्रम को आगे बढ़ाते हुए सत्यार्थप्रकाश को चार भाषाओं में वितरित करने की योजना बनाई है, क्रमश: हिन्दी, अंग्रेजी, पंजाबी, उर्दू का सत्यार्थप्रकाश प्रकाशन की प्रक्रिया में है।

ऋषि जीवनी भी अंग्रेजी, हिन्दी दोनों भाषाओं में तैयार कराई जा रही है। सभी धर्मानुरागियों से निवेदन है, इस कार्य के लिए आप जितना अधिक सहयोग प्रदान करेंगे। सभा उतने ही विशाल रूप में इस कार्यक्रम को सम्पन्न करेगी। पूर्व की भाँति आपका सहयोग व समर्थन प्राप्त होगा।

सहयोग राशि निम्न क्रमांक के खातों में जमा कराई जा सकती है अथवा बैंक ड्राफ्ट, चेक द्वारा प्रेषित कर कार्यालय में जमा कराई जा सकती है।

खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर

१. बैंक बचत खाता (Savings) संख्या-091104000057530 बैंक का नाम-आई.डी.बी.आई. बैंक, पावरहाउस के सामने, जयपुर रोड, अजमेर। IFSC - IBKL0000091

२. बैंक बचत खाता (Savings) संख्या -10158172715 बैंक का नाम - भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर। IFSC - SBIN0007959

जो ईश्वर वेदविद्या से अपने सांसारिक जीवों और जगत् के गुण, कर्म्म, स्वभावों को प्रकाशित न करता तो किसी मनुष्य को विद्या और इन का ज्ञान न होता और विद्या वा उक्त पदार्थों के ज्ञान के बिना निरन्तर सुख क्यों कर हो सकता है।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.५४

तर्क के बिना कोई भी विद्या किसी मनुष्य को नहीं होती और विद्या के बिना पदार्थों से उपयोग भी कोई नहीं ले सकता।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.५६

कविता

- आचार्य ओमदेव

१. क्या लाये थे, क्या ले जाओगे,
मुट्ठी बान्धे आये, हाथ पसारे जाओगे।
ईश्वर ने हमको, तुमको सारे जग को
कम नहीं कहीं पर कुछ कीन्हाँ,
जीने को सब कुछ दीन्हाँ
धरती, गगन, अम्बारे,
सूरज, चाँद, सितारे,
लगते जिगर के प्यारे,
पत्नी, बेटी, बेटा प्यारे,
कुछ दिन के हैं सारे
सब छोड़ कर जाओगे।
क्या लाये थे, क्या ले जाओगे.....।

२. कभी न रुकने वाला, कभी न थकने वाला
ये संसार सदियों से चलता आया,
चलते-चलते चलता जायेगा
फल-फूलों से लदी डाली
महकती हरी-भरी फुलवाड़ी
देखकर इसको सारे
दे डाले आशीष प्यारे
सब जने फूले फले
फिर भी वसन्त में जाओगे
क्या लाये थे, क्या ले जाओगे.....।

३. देखने, सुनने, सूंघने, चखने, छूने को
आँख, कान, नाक, अऊ रसना
खाल से ढका है पूरा तना
अंग-अंग सब ढंगवाला
रूप भी तेरा निराला
बुद्धि का ढक्कन लगा
मन का चक्कर चला
तब आत्मा का घर बना
इसी से कर्म भोग जोओगे।
क्या लाये थे, क्या ले जाओगे.....।

- महर्षि दयानन्द सरस्वती आर्य गुरुकुल, सोनाखार, छिन्दवाड़ा, म.प्र.-४८०००२

पुस्तक - समीक्षा

पुस्तक का नाम - प्रभु-भक्ति गीत मंजरी एवं वैदिक यज्ञ-कविता भावार्थ सहित।

संकलन व सम्पादन - श्री सत्यानन्द आर्य, आर्य प्रकाशन, १४, कुडेवालान, अजमेरी गेट, दिल्ली-११०००६

मूल्य - ६०/- रु. **पृष्ठ संख्या** - १२०

ईश्वर की भक्ति के अनेक रूप हैं। मन, वचन, कर्म सच्ची भक्ति के आधार हैं। वेद यही बताता है। परमात्मा का गुणानुवाद भजनों में भाव, भाषा, लय, कंठध्वनि अपना विशेष महत्त्व रखता है। हर व्यक्ति सस्वर गान नहीं कर सकता। आरोह-अवरोह का भी ध्यान आवश्यक है। मन की रुचि, उत्कंठा का स्थान भी महत्त्वपूर्ण है।

संकलन व सम्पादन कर्त्ता भी अपने मान्य पिता से संस्कारित एवं प्रेरित हुए। उनके पिता श्री स्व. श्री लालमन जी आर्य जगविख्यात भजनोपदेशक व गायक थे, उनके बोल आज भी हैं, भविष्य में भी प्रभावित रहेंगे।

उनकी सद्प्रेरणा के कारण आप श्री सत्यानन्द आर्य प्रभावित हुए। आपने अनेक भजनोपदेशकों के मुख्य-मुख्य भजनों को संकलित किया है जो अति प्रेरणादायक है। प्रभु-भक्ति की गीत मंजरी पाठकों के सामने प्रेषित की है।

यज्ञ हमारी मनोकामनाओं की पूर्ति करता है। स्वर्ग की कामना के लिए भी यज्ञ का अनुपम महत्त्व है। वैदिक यज्ञ के मन्त्रों को कविता भावार्थ सहित प्रस्तुत किया। हर जिज्ञासु मन्त्रों के भावों को समझकर यज्ञ का आनन्द व लाभ ले सकता है। प्रभु की निकटता गेय भजनों से ज्ञात होती है। अनेक भजन तो हमारी जिह्वा पर प्रायः मंडराते हैं। गीत मंजरी के कलेवर में अनेक भजन हैं जो हमें भाव विभोर एवं परमात्मा में तन्मयता की ओर प्रेरित करने वाले हैं। गीत मंजरी का मुख्य पृष्ठ व आन्तरिक मुद्रण भी अच्छा है। संकलनकर्त्ता ने भजन के साथ दोहे भी प्रस्तुत किये हैं। पाठक कितना रसास्वादन कर अपने को भाग्यशाली समझ दाता को समझने का प्रयास करेगा। अधिक से अधिक प्राप्त करे, यही प्रभु से कामना है संकलन व सम्पादन कर्त्ता का सही अर्थ में साधुवाद।

- देवमुनि, ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर

जिज्ञासा समाधान - ८०

- आचार्य सोमदेव

जिज्ञासा १- मैं विगत दो वर्षों से 'परोपकारी' का सदस्य हूँ। इसके अलावा मैं तपोभूमि (मथुरा) का भी सदस्य हूँ तथा 'आर्यजगत्' (साप्ताहिक दिल्ली) का चार वर्षों से सदस्य हूँ। मेरी ऋषि आश्रम में आने की इच्छा भी बहुत रहती है किन्तु मन में झिझक बनी रहती है क्योंकि वर्तमान में मैं भी अपने आपको संन्यासी कहता हूँ किन्तु आपकी (आर्यसमाज) की परिभाषा का संन्यासी नहीं हूँ।

मैं ब्राण्डेड संन्यासी नहीं हूँ क्योंकि मैं किसी भी विचारधारा विशेष का पूर्णरूपेण अनुगामी या स्वीकार करने वाला नहीं हूँ। मुझे मेरी कुबुद्धि से जो नहीं जंचता है उसको मैं स्वीकार नहीं कर पाता हूँ। वैसे 'वसुधैव कुटुम्बकम्' का मेरा सोच है और ज्ञानार्जन का मैं पिपासु हूँ अत: सभी धर्मों, विचारधाराओं, मतों को जानने की मेरी प्यास रहती है। इसीलिये वेदों के प्रति मेरी प्यास होने से मैंने आर्यसमाज के विचारों को जानना चाहा।

इस सन्दर्भ में मैं कोटा के एक आर्यसमाजी विद्वान् श्री शिवनारायण जी उपाध्याय के सम्पर्क में आया और उनसे बहुत ही प्रभावित हुआ। जयपुर में मैं ऐसे किसी विद्वान् से सम्पर्क में नहीं आया हूँ।

मैं स्वयं दर्शनशास्त्र विषय का स्नातकोत्तर विद्यार्थी रहा हूँ तथा पाँच वर्ष शिक्षा विभाग में राजकीय महाविद्यालयों में प्राध्यापक रह चुका हूँ। तदुपरान्त ३३ वर्षों तक मैं पुलिस विभाग में राजपत्रित अधिकारी रहा हूँ। सेवानिवृत्ति के बाद मैंने अपने आपको संन्यासी घोषित कर अपने निवास स्थान पर ही एक आध्यात्मिक केन्द्र बना कर जीवन यापन कर रहा हूँ जहाँ मैं सार्वभौमिक मानवतावादी विचार की व्याख्या विशेषकर 'गीता' के माध्यम से करता हूँ और स्वाध्यायरत रहता हूँ।

मैं यह सब इसलिये लिख रहा हूँ कि मेरी जैसी सोच के व्यक्ति का भी यदि आपके 'ऋषि उद्यान' में किसी कार्यक्रम में या वैसे ही कुछ दिनों के लिये स्वीकृति हो तो मैं 'ऋषि आश्रम' में आना चाहता हूँ। ताकि वहाँ कुछ समय रहकर विद्वानों का लाभ ले सकूँ और अपने आपको गौरवान्वित कर सकूँ।

मेरी 'सत्यार्थप्रकाश' पढ़ने के बाद कुछ जिज्ञासाएँ उठी हैं। कृपया यदि आप पत्र द्वारा या 'परोपकारी' के माध्यम से इनका समाधान कर सकें तो बड़ी ही कृपा होगी।

जिज्ञासाएँ- **१.** इस सृष्टि की उत्पत्ति हुए १,९६,०८,५३,११५ वर्ष हो गये हैं। लेकिन 'मानव' की उत्पत्ति हुए कितने वर्ष हुए हैं?

२. मानव की उत्पत्ति के पूर्व क्या पशु, पक्षी, जलचर, वनस्पति, खाद्य पदार्थों आदि की उत्पत्ति हो गई थी या नहीं? अर्थात् इनकी उत्पत्ति कब हुई?

३. वेदों की प्रामाणिकता या सत्ता को नहीं मानने वाला क्या कोई व्यक्ति ईश्वर को प्राप्त कर सकता है और ऋषि, महर्षि आदि कहला सकता है?

ईश्वर प्राप्ति से आशय 'मुक्ति' से है।

-मानवता, १९४, तीसरी मंजिल, पार्श्वनार्थ नगर, सांगानेर अन्तर्राष्ट्रीय हवाई अड्डा, जयपुर

समाधान १ (क)- इस विषय में आर्यजगत् की पत्र-पत्रिकाओं में समय-समय पर लेख आते रहे हैं, आते रहते हैं, ये जो समय है वह वेदोत्पत्ति व मानवोत्पत्ति का ही है। मानव सृष्टि की उत्पत्ति को महर्षि ने सृष्टि उत्पत्ति कहा है और यही काल वेदोत्पत्ति का है। वेद की आवश्यकता मनुष्य के लिए है, पशु, पक्षी या जड़ जगत् के लिए नहीं। ब्रह्मदिन का आरम्भ तो उसी दिन हो जाता है जबसे परमाणुओं का संयोग विशेष प्रारम्भ होता है। किन्तु व्यवहारिक सम्वत् मानवोत्पत्ति से आरम्भ होता है। सृष्टि उत्पत्ति की प्रक्रिया आरम्भ होने के पश्चात् मानवोत्पत्ति होने तक पर्याप्त समय लगा होगा। सृष्टि रचना का वर्णन करते हुए महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थप्रकाश समुल्लास ९ में लिखा है ''परमसूक्ष्म तत्त्वों का प्रथम ही जो संयोगारम्भ है, संयोग विशेषों से अवस्थान्तर दूसरी अवस्था को, सूक्ष्म से स्थूल-स्थूल बनते-बनते विचित्र रूप बनी है। इसी से यह संसर्ग होने से सृष्टि कहलाती है।'' 'बनते-बनते बनी' इन शब्दों से स्पष्ट है कि महर्षि दयानन्द के मत में यह विराट, विचित्र तथा वैविध्यपूर्ण सृष्टि मुसलमानों के अनुसार 'कुन' (होजा) शब्द का उच्चारण होते ही पलभर में बनकर खड़ी नहीं हुई।

जैवी सृष्टि से पूर्व जीव के लिए अपेक्षित सामग्री का होना आवश्यक था। महर्षि ने इसका संकेत सत्यार्थप्रकाश समुल्लास ९ में किया है ''मनुष्य की सृष्टि पहले हुई या पृथिवी आदि की?'' इस प्रश्न के उत्तर में ऋषिवर लिखते

हैं- ''पृथिवी आदि की क्योंकि पृथिवी आदि के बिना मनुष्य की स्थिति और पालन नहीं हो सकता।'' जब से मनुष्य उत्पत्ति हुई है तभी से कालगणना का आरम्भ हुआ है। मनुष्य के बिना अन्य कोई प्राणी काल गणना नहीं कर सकता, इसलिए यह १, ९६,०८,५३,११५ वर्ष वाली कालगणना मानव सृष्टि उत्पत्ति व वेद उत्पत्ति की है।

इस सन्दर्भ में महर्षि ने लिखा कि ''सो सृष्टि की उत्पत्ति से लेके आज पर्यन्त दिन-दिन गिनते और क्षण से लेके कल्पान्त की गणितविद्या को प्रसिद्ध करते चले आते हैं अर्थात् परम्परा से सुनते-सुनाते, लिखते-लिखाते और पढ़ते-पढ़ाते आज पर्यन्त हम लोग चले आते हैं।''

(ख) मानव की उत्पति से पहले पशु, पक्षी, जलचर, वनस्पति, खाद्य पदार्थ आदि उत्पन्न हो गये थे। क्योंकि इनके बिना मानव जीवन चलना असम्भव है इसलिए ये सब मानव उत्पत्ति से पूर्व उत्पन्न हो गये थे। मानव उत्पत्ति को सृष्टि रचना की सबसे बाद की रचना कह सकते हैं। प्राणी के प्रादुर्भाव से पूर्व इस धरती पर वायु, जल, लता, औषधी, वनस्पती, फल-मूल आदि खाद्य पदार्थ तथा सूर्य, चन्द्रमा अन्य आवश्यक साधन उपलब्ध थे। इनके बिना प्राणी मात्र का धरती पर रहना सम्भव न था। यजु. ३१.६ के अनुसार

सं भृतं पृषदाज्यम्।
पशुं स्तांश्चक्रे वायव्यानारण्या ग्राम्याश्च ये।

अर्थात् परमेश्वर ने पहले दध्यादि भोग्य पदार्थों तथा वायु में गमन करने वाले पक्षियों, सिंह-व्याघ्रादि वनैले पशुओं और नगरों तथा गाँवों में रहने वाले गाय, घोड़े आदि पशुओं को उत्पन्न किया। इस प्रकार जड़ जगत् की रचना पूर्ण होने पर चेतन जगत् की और चेतन जगत् में भी क्रमशः सृष्टि हुई सबके अन्त में मानव उत्पत्ति हुई। इस प्रकार पशु-पक्षी आदि की उत्पत्ति, सृष्टि रचना के प्रथम परमाणु के संयोगारम्भ से लेकर मानवोत्पत्ति के बीच का जो काल है उसमें हुई।

(ग) वेदों को न मानने वाला व्यक्ति मुक्ति को प्राप्त नहीं कर सकता और न ही ऋषि-महर्षि आदि कहला सकता। क्योंकि ईश्वर का विशुद्ध स्वरूप वेद में ही कहा गया है अन्य किसी मत के ग्रन्थ में नहीं। जब व्यक्ति ईश्वर के विशुद्ध स्वरूप को जानेगा ही नहीं तो वह मुक्त कैसे हो सकता है? क्योंकि वेद में कहा है-

वेदाहमेतं पुरुषं महान्तमादित्यवर्णं तमसः परस्तात्।
तमेव विदित्वाति मृत्युमेति नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय।।
- य. ३१

अर्थात् किस पदार्थ को जानके मनुष्य ज्ञानी होता है? उत्तर- उस महान् परमेश्वर ही को यथावत् जानके ठीक-ठीक ज्ञानी होता है, अन्यथा नहीं। जो सबसे बड़ा, सबका प्रकाश करने वाला और अविद्या-अन्धकार अर्थात् अज्ञानादि दोषों से रहित है, उसी पुरुष को मैं परमेश्वर और इष्टदेव जानता हूँ। उसको जाने बिना कोई मनुष्य यथावत् ज्ञानवान नहीं हो सकता। क्योंकि उसी परमात्मा को जानके और प्राप्त होके जन्म-मरण आदि क्लेशों के समुद्र समान दुःख से छूट के परमानन्दस्वरूप मोक्ष को प्राप्त होता है अन्यथा किसी प्रकार से मोक्ष को प्राप्त नहीं हो सकता।

इसलिए जो ईश्वर को यथार्थ रूप से जानने वाला है वह वेदों को अवश्य मानेगा। बिना वेद मन्त्रों के द्रष्टा होने के कोई ऋषि-महर्षि भी नहीं कहला सकता। ऋषि होने के लिए मन्त्र द्रष्टा बनना आवश्यक है। तात्पर्य यह है कि वेद को माने बिना व्यक्ति पूर्ण रूप से मुक्ति नहीं प्राप्त कर सकता और न ही ऋषि कहला सकता।

जिज्ञासा २- मेरे मन में कुछ समय से दो प्रश्न बार-बार उठ रहे थे, वह आपकी सेवा में इस प्रकार प्रस्तुत कर रहा हूँ। कृपया वैदिक मान्यतानुसार समुचित समाधान करने की कृपा करें।

१. राजस्थान पत्रिका में, रविवार को छोड़कर, नरेन्द्र कोहली का महाभारत के विषय में क्रमबद्ध लेख (महासमर) आता रहा है। उसमें पिछले अंकों में एक प्रसंग आया था, जिसमें दुर्योधन की पुत्री लक्ष्मणा को श्री कृष्ण के पुत्र सांब अपहरण कर ले गया था। दुर्योधन उन दोनों को पकड़ कर वापिस हस्तिनापुर ले आया था। फिर बलराम ने बीच में पड़ कर उन दोनों को विवाह बन्धन में बान्ध दिया। अधिक विस्तार न देकर मैं जानना चाहता हूँ कि यह सांब क्या सचमुच श्री कृष्ण का पुत्र था। जबकि आर्यसमाज के वक्ता प्रद्युम्न को ही एक मात्र श्री कृष्ण की सन्तान मानता है। वह भी बारह वर्ष की कठोर तपस्या के बाद।

२. वाल्मीकि रामायण के प्रणेता महर्षि वाल्मीकि के विषय में नाना प्रकार की भ्रान्त धारणाएँ देश में फैली हुई हैं। सभी धर्मों के अनुयाई एवं बच्चों की पाठ्य पुस्तकों में भी बच्चों को यही बताया व पढ़ाया जाता है कि वाल्मीकि पहले डाकू थे और मार्ग में आने-जाने वालों को लूट लेते थे। एक दिन कुछ साधुओं की टोली आई तो उनसे भी उसी प्रकार लूट-खसोट करने लगे। साधुओं ने उससे कहा भाई पहले अपने घर वालों को तो पूछ लो कि तुम जो कर रहे हो उसमें वे भी भागीदार हैं या नहीं। उसने घर

जाकर पूछा तो उत्तर मिला कि तुम्हारे इस पाप कर्म के भागीदार हम नहीं हो सकते। उसी समय से उसने यह धन्धा छोड़ दिया और साधु हो गया। आर्यजगत् में भी कुछ विद्वान् ऐसे ही उदाहरण देते रहते हैं। परोपकारी मार्च द्वितीय पक्ष २०१४ के अंक में एक सज्जन श्री सुरेशचन्द्र त्यागी लिखते हैं कि राम सोमरस पीते थे, शराब नहीं।

यह सज्जन लिखते हैं कि वाल्का भील से बने महर्षि वाल्मीकि ने रामायण महाकाव्य लिखा है। इस भ्रान्त धारणा को दूर करने के लिए स्वामी जगदीश्वरानन्द द्वारा लिखित वाल्मीकि रामायण के बाल काण्ड द्वितीय सर्ग में सीता जी की पवित्रता की साक्षी को देते हुए ऋषि कहते हैं-

प्रचेत्सोहं दशमः, पुत्रो राघवनन्दनम्।
मनसा, कर्मणा, वाचा भूतपूर्वं न किल्विषम्।।

भावार्थ- हे राम! मैं प्रचेतस मुनी का दशम पुत्र हूँ। मैंने मन, वचन और कर्म से कभी पापाचार नहीं किया। इससे यह सिद्ध होता है कि जिसे डाकू कहते हैं, वह कोई और हो सकता है। एक नाम के लाखों लोग हो सकते हैं। कृपया समाधान करने की कृपा करें।

- रामकिशोर शर्मा, ८२/१५२, नीलगिरी मार्ग, मानसरोवर, जयपुर-३०२०२० (राज.)

समाधान २ (क) - अनेक वक्ता, लेखक प्रमाणों के मूल तक न जाकर सुनी-सुनाई बातों को बोलते-लिखते रहते हैं। जिससे जनता के पास यथार्थ बातें न जाकर विपरीत ज्ञान जाता रहता है। आर्यसमाज की विशेषता यह है कि वह विशुद्ध ज्ञान का संवाहक है। आर्यसमाज के वक्ताओं को इसके अनुसार प्रमाणपूर्वक बोलना चाहिए। आपने जो आर्यसमाज के जिन भी वक्ताओं से सुना कि श्री कृष्ण जी के एक ही पुत्र प्रद्युम्न थे, यह उनके अधूरे ज्ञान का द्योतक है। क्योंकि महाभारत में श्री कृष्ण के तीन पुत्रों का स्पष्ट वर्णन आता है-

साम्बं च निहतं दृष्ट्वा चारुदेष्ण च माधवः।
प्रद्युम्नं चानिरुद्धं च ततश्चुक्रोध भारत।।

यह श्लोक महाभारत के मौक्षलपर्व के प्रथम अध्याय का है। इस श्लोक में श्री कृष्ण के तीन पुत्र साम्ब, चारुदेष्ण और प्रद्युम्न तथा एक पौत्र अनिरुद्ध का वर्णन है। कोहली जी ने जो कृष्ण के साम्ब पुत्र का कथन किया है, सो ठीक है।

जैसे श्री कृष्ण के एक पुत्र के विषय में भ्रान्ति है वैसे ही द्रोपदी के पाँच पति होने में भी भ्रान्ति है। लोक में प्रायः द्रोपदी को पाँच पतियों वाली कहा जाता है, जो कि एक नितान्त भ्रान्त धारणा है। यह धारणा भी सुन-सुनाकर लोगों में बनी चली गई, यदि महाभारत को ठीक से पढ़ा जाता तो यह धारणा न बनती। महाभारत में कहीं भी द्रोपदी को पाँच पतियों वाली नहीं कहा गया, हाँ उनके एक पति होने का तो वर्णन अवश्य है। देखिए-

तमब्रवीत् ततो राजा धर्मात्मा च युधिष्ठिरः।
ममषि दारसम्बन्धः कार्यस्तावद् विशाम्पते।।

तब धर्मात्मा राजा युधिष्ठिर ने द्रुपद से कहा- ''राजन विवाह तो मेरा भी करना होगा।''

यह सुनकर द्रुपद ने कहा-

भवान् वा विधिवत् पाणिं गृह्णातु दुहितुर्मम।
यस्य वा मन्यसे वीर तस्य कृष्णामुपादिश।।

हे वीर! तब आप ही विधिपूर्वक मेरी पुत्री का पाणिग्रहण करें अथवा आप अपने भाइयों में से जिसके साथ चाहें, उसी के साथ कृष्णा को विवाह की आज्ञा दे दें। द्रुपद के ऐसा कहने पर-

ततः समाधाय स वेदपारगो, जुहाव मन्त्रैर्ज्वलितं हुताशनम्।
युधिष्ठिरं चात्युपनीय मन्त्रविद् नियोजयामास सहैव कृष्णया।।

वेद के पारंगत विद्वान् मन्त्रज्ञ पुरोहित धोम्य ने वेदी पर प्रज्ज्वलित अग्नि की स्थापना करके उसमें मन्त्रों द्वारा आहुति दी और युधिष्ठिर को बुलाकर कृष्णा के साथ गठबन्धन कर दिया।

प्रदक्षिणं तौ प्रगृहीतपाणिकौ, समानयामास स वेदपारगः।
ततोभ्यनुज्ञाय तमाजिशोभिनं, पुरोहितो राजगृहाद् विनिर्ययौ।।

वेदों के पारंगत विद्वान् पुरोहित धोम्य ने उन दोनों दम्पत्ति का पाणिग्रहण कराकर उनसे अग्नि की प्रदक्षिणा करवाई, फिर अन्य शास्त्रोक्त विधियों का अनुष्ठान कराके उनका विवाह कार्य सम्पन्न कर दिया। तत्पश्चात् संग्राम में शोभा पाने वाले युधिष्ठिर को निवृत्ति देकर पुरोहित जी भी उस राजभवन से बाहर चले गये। यह वर्णन महाभारत के आदि पर्व के ३२वें अध्याय में है। इससे स्पष्ट हो रहा है कि द्रोपदी पाँचों पाण्डवों की पत्नी न होकर केवल युधिष्ठिर की पत्नी थी।

(ख) आपने ठीक समझा कि वाल्मीकि रामायण के प्रणेता महर्षि वाल्मीकि कोई चोर-डाकू नहीं रहे अपितु वे तो ऋषि परम्परा में पले-बढ़े हुए एक उच्च कोटि के विद्वान् थे। यदि वे चोर-डाकू होते तो यह बात कदापि न कहते-

प्रचेतसोऽहं दशमः पुत्रो राघवनन्दन।

न स्मराम्यनृतं वाक्यमिमौ तु तव पुत्रकौ।।
मनसा कर्मणा वाचा भूतपूर्वं न किल्विषम्।
तस्याहं फलमश्नामि अपापा मैथिली यदि।।

रघुकुल नन्दन! मैं प्रचेता (वरुण) का दसवाँ पुत्र हूँ। मेरे मुँह से कभी झूठ बात निकली हो, इसकी याद मुझे नहीं है। मैं सत्य कहता हूँ, ये दोनों आपके ही पुत्र हैं। मैंने मन, वाणी और क्रिया द्वारा भी पहले कभी कोई पाप नहीं किया है। यदि सीता निष्पाप हो, तभी मुझे उस पाप शून्य पुण्य कर्म का फल प्राप्त हो। इस आधार पर वाल्मीकि के विषय में जो कथा प्रचलित है कि प्रारम्भ में डाकू थे फिर ऋषि बने, ये कपोल कल्पना मात्र है। रामायण के रचयिता वाल्मीकि लाखों वर्ष पूर्व हुए हैं और इस अन्तराल में हजारों वाल्मीकि नाम के हुए होंगे, उनमें से वाल्मीकि नामक कोई एक डाकू होकर ऋषि बना हो, हो सकता है किन्तु वो रामायण वाले वाल्मीकि नहीं हैं।

- ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर

परोपकारी के सुधी पाठकों के लिए आवश्यक सूचना

परोपकारी शुल्क भेजते समय नये या पुराने ग्राहक के उल्लेख के साथ-साथ ग्राहक संख्या अवश्य लिखें अन्यथा व्यक्ति के नाम से शुल्क जमा करने में कठिनाई आती है। फलस्वरूप पाठकों के पास पत्रिका नहीं पहुँच पाती है। ऐसे ही अपना नाम हटवाते व जुड़वाते समय दूरभाष संख्या सहित अपना पूरा विवरण लिखकर भेजें। ई.एम.ओ. के द्वारा शुल्क भेजने वाले ग्राहक भी सन्देश के साथ अपनी ग्राहक संख्या सहित पूरा विवरण भेजें। परोपकारिणी सभा आप सभी का सहयोग चाहती है।

वैदिक साहित्य पर विशेष छूट

दानी महानुभावों के विशेष सहयोग से वैदिक पुस्तकालय, अजमेर द्वारा प्रकाशित रु. १६३५/- मूल्य की निम्न पुस्तकों का एक सैट ग्राहकों को आधे मूल्य (५० प्रतिशत) में अर्थात् रु. ८१७/- में दिया जा रहा है। पुस्तकों को डाक द्वारा मँगाने पर डाक व्यय के रु. १८३/- अतिरिक्त सहित कुल राशि रु. १०००/- में ग्राहकों को देय होगा।

पुस्तकों के सैट उपलब्धता रहने तक प्राथमिकता के आधार पर देय होंगे।

क्र. सं.	पुस्तक सं.	पुस्तक का नाम		मूल्य
१.	१२	ऋग्वेद भाषा भाष्य-१२ पुस्तक-१ सैट		६१०.००
२.	२	यजुर्वेद भाषा भाष्य-२ पुस्तक-१ सैट		४७५.००
३.	३	दयानन्द ग्रन्थमाला-३ पुस्तक- १ सैट		५५०.००
	१७		**योग**	**१६३५.००**

पुस्तकें मँगाने हेतु धनराशि-एम.ओ., डिमाण्ड ड्राफ्ट या ऑनलाईन द्वारा

खातेदार-वैदिक पुस्तकालय, अजमेर

बचत खाता संख्या- 0008000100067176,

बैंक- पंजाब नेशनल बैंक, कचहरी रोड, अजमेर

आई.एफ.एस.सी. संख्या PUNB 0000800 के द्वारा भेज सकते हैं।

जो खोटे काम करने वाला पुरुष अनेक प्रकार से अपने बल को उन्नत कर सबको दुःख देना चाहे, उसको राजा सब प्रकार से दण्ड दे। तो भी वह अपनी अत्यन्त खोटाइयों को न छोड़े तो उसको मार डाले अथवा नगर से इसको दूर निकाल बन्द रखे।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.४४

अतिथि यज्ञ के होता बनें

महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा आर्य जगत् की एक मात्र ऐसी संस्था है जो सामूहिक सहयोग से ऋषि द्वारा निर्धारित लक्ष्यों की पूर्ति हेतु कृत संकल्प है।

सभा निरंतर प्रगति के पथ पर अग्रसर है। निरंतर अबाध गति से ऋषि उद्यान को आकर्षक एवं जन उपयोगी बनाने हेतु नव निर्माण करा रही है, वेद प्रचार पूरे देश में संचालित कर रही है, वेदों का एवं ऋषि ग्रंथों का प्रकाशन निरंतर जारी है।

प्रातः एवं सायं दैनिक यज्ञ– प्रवचन, वेद–पाठ, उपनिषद्, दर्शनादि शास्त्रों की कथा द्वारा वैदिक धर्म का कार्य नियमित रूप से आश्रम में चलता है। ***गुरुकुल***– आर्ष पद्धति से संचालित गुरुकुल में पढ़ रहे ब्रह्मचारी जो साधना एवं समाज सुधार का लक्ष्य लेकर अध्ययनरत हैं उनकी सभी आवश्यकताओं की पूर्ति निःशुल्क की जाती है। ***अतिथि सेवा***– अतिथियों को यथोचित सुविधा प्रदान करने हेतु सभा पूर्ण रूपेण प्रयासरत है एवं सभी सुविधाएँ आवास, प्रातराश, भोजन की व्यवस्था निःशुल्क की जाती है। ***गोशाला***– गोशाला में चालीस के लगभग पशु हैं। इससे अधिक का स्थान नहीं है। आश्रमवासियों को गोशाला में उत्पादित दुग्ध का निःशुल्क वितरण किया जाता है। ***वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम***– वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम में रहकर साधनारत वानप्रस्थियों एवं संन्यासियों की सभी प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति सभा द्वारा निःशुल्क की जाती है। स्वाध्याय एवं साधना की व्यवस्था है। ***विशाल पुस्तकालय***– इसमें दुर्लभ ग्रंथों का संग्रह है, सभा द्वारा शोध कर्ता छात्रों को शोध कार्य हेतु ग्रंथ निःशुल्क प्रदान किए जाते हैं जिनका लाभ स्वाध्यायशील व्यक्ति भी उठा सकते हैं। ***व्यायामशाला***– योग्य शिक्षक द्वारा नगर के युवाओं को ऋषि उद्यान में निःशुल्क व्यायाम प्रशिक्षण दिया जाता है। सभा द्वारा नियुक्त व्यायाम शिक्षक आसपास के गांवों से भी आर्यवीर दल का प्रशिक्षण शिविरों में प्रदान करते हैं।

ये सभी क्रियाकलाप आपके पावन उदार सहयोग से ही संभव हैं। जैसा कि सर्वविदित है कि सभा का आधार ही आकाशीय दानवृत्ति है। आपको प्रतिदिन अतिथि मिलना संभव नहीं फिर अतिथि यज्ञ कैसे किया जाय इसका उपाय है, कुछ राशि प्रतिदिन अतिथि यज्ञ के नाम से निकाल ली जाये और उसको एकत्र कर अतिथि सत्कार में गुरुकुल में भोजन आदि के सहयोग में दे दी जाय।

सभा के धार्मिक क्रियाकलापों एवं आवासीय स्थल ऋषि उद्यान में उपर्युत पावन क्रियाकलाप लम्बे समय तक अबाध चलते रहें इसके लिए सभा की योजना है कि प्रतिदिन १० रुपये अथवा प्रतिवर्ष ५ हजार की राशि प्रदान करने वाले उदार यशस्वी दानदाताओं का नाम अतिथि यज्ञ के स्थायी सदस्यों में अंकित किया जाता है ऐसे सज्जनों के नाम का परोपकारी में प्रकाशन भी किया जाता है।

अनेक 'अतिथि यज्ञ के होता' सदस्यों का आग्रह है, निश्चित तिथि जन्मदिन, विवाह वर्ष गांठ या विशेष अवसर पर वे अपनी ओर से संस्था में भोजन कराना चाहते हैं। ऐसे महानुभावों से निवेदन है कि वे अतिथि यज्ञ के होता के रूप में एक दिन के भोजन व्यय की राशि पाँच हजार एक सौ रुपये भेजते हुए इच्छित दिन का विवरण सूचित करेंगे तो उसका उल्लेख आश्रम के सूचना पट्ट पर किया जा सकेगा।

यह अल्प राशि आप दैनिक संचय घट में जमा भी कर सकते हैं, वर्ष में लोग अरबों रुपए आग में पटाके फोड़कर जलाते हैं असावधानी से बिजली जलती छोड़ इसे गंवा देते हैं आदि ऐसी छोटी–छोटी असावधानियों को रोक कर हम उसकी बचत राशि इस पावन कृत्य हेतु सभा को वर्ष में आसानी से दे सकते हैं।

सभा शिविरों के आयोजन द्वारा जन सामान्य को ऋषियों की जीवन प्रणाली सिखा रही है। आप इस योजना में स्थायी सदस्य बनकर ऋषि का संकल्प *संसार का उपकार* की पूर्ति में एक स्तम्भ बनकर सभा को सम्बल प्रदान कर सकते हैं।

यदि अपने सामर्थ्य के अनुसार राशि को न्यूनाधिक करना चाहें तो आपकी स्वतन्त्रता है अधिक से अधिक लोग परोपकारिणी सभा से जुड़ सकें, आप ऐसा करके ऋषि दयानन्द के कार्यों को आगे बढ़ाने में सहायक होंगे इसलिए ऐसी राशि निश्चित की है। आप से प्रार्थना है अपना नाम पता और संकल्प लिखकर अवगत करायें और अतिथि यज्ञ के होता बनें। अपनी राशि प्रतिमाह अथवा सुविधानुसार मनीआर्डर/डीडी/चैक द्वारा अथवा स्वयं उपस्थिति होकर कार्यालय में जमा करा सकते हैं। आपका दान ८०जी (आयकर की धारा) के अंतर्गत कर मुक्त होगा।

अतः आपसे निवेदन है कि आप भी अतिथि यज्ञ के होता बनिये। जिन महानुभावों ने हमारा निवेदन स्वीकार कर यज्ञ में अपनी आहुति दी है, उनके नाम यहाँ प्रकाशित किये जा रहे हैं।

अतिथि यज्ञ के होता

(१ से १५ जनवरी २०१५ तक)

१. श्री किशन गुप्ता, कोलकाता २. सुश्री वेदिका गुप्ता, कोलकाता ३. सुश्री विदुषी गुप्ता, कोलकाता ४. श्रीमती नीतू गुप्ता, कोलकाता ५. श्री वेदान्त गुप्त, कोलकाता ६. श्री विनोद, कोलकाता ७. श्रीमती अनिता गुप्ता, कोलकाता ८. श्री अंकित गुप्ता, कोलकाता ९. श्री आयुष गुप्ता १०. सुश्री आशा गुप्ता, कोलकता ११. श्री बजरंग, रुचि गुप्ता, कोलकता १२. सुश्री परिधि गुप्ता, कोलकता १३. श्री अनन्त गुप्ता, तमिलनाडु १४. श्री विनय, सीमा गुप्ता, तमिलनाडु १५. श्री गौरव गुप्ता, तमिलनाडु १६. श्री कन्हैयालाल आर्य, गुड़गाँव, हरियाणा १७. श्री देवमुनि, अजमेर १८. श्रीमती नन्दिनी, गुड़गाँव, हरियाणा १९. श्री आयुषमान अनन्त, मेरठ, यू.पी. २०. कृपा निधि ट्रस्ट, कोलकाता २१. श्री महावीर यादव, जयपुर, राज. २२. श्री एम.एल. गोयल, अजमेर २३. श्री योगेन्द्र नाथ गुप्ता, जम्मू २४. श्री किशोर काबरा, अजमेर २५. श्री दयानन्द बुंजन, मॉरिशस २६. श्री रमेशचन्द्र, खिरी, उत्तरप्रदेश २७. श्री राजेश कुमार, दिल्ली २८. डॉ. स्वतन्त्रानन्द शास्त्री, रोहतक, हरियाणा, २९. श्री आर. आनन्द कृष्णा, शादिपुर, अण्डमान ३०. श्री वीरेन्द्र विष्णु दाधीच, अजमेर ३१. श्री राजेश पसरिचा, जालन्धर, पंजाब ३२. श्री गोकुलचन्द भगत, जालन्धर, पंजाब ३३. श्रीमती सुशीला भगत, जालन्धर, पंजाब ३४. श्री ऋषभ भगत, जालन्धर, पंजाब ३५. श्री भास्कर सेनगुप्ता, बेंगलूरु ३६. श्री अवनीश कपूर, नई दिल्ली ३७. स्वस्तिकाम: चैरिटेबल ट्रस्ट, अमरावती, महा. ३८. श्री नीरु कपूर, जालन्धर, पंजाब ३९. श्रीमती कमलकान्ता आनन्द, जालन्धर, पंजाब ४०. श्री गौरव शर्मा, गुड़गाँव, हरियाणा ४१. श्री प्रतीश कालीरमन, हिसार, हरियाणा ४२. श्री प्रभुलाल कुमावत, किशनगढ़, राज. ४३. श्रीमती पुष्पलता उपाध्याय, अजमेर ४४. श्रीमती नारायणी देवी आर्या, गुडगाँव, हरि. ४५. श्रीमती मेहता माता, अजमेर ४६. श्री विजय सिंह गहलोत, अजमेर।

– परोपकारिणी सभा, अजमेर।

गौभक्तों से निवेदन

ऋषि उद्यान में परमार्थ हेतु गौशाला संचालित है। गौशाला में उत्पादित गौवों के दूध का वितरण सभी गुरुकुलवासियों, संन्यासियों एवं आगन्तुक अतिथियों में नि:शुल्क किया जाता है। आप सभी गौ-भक्तों एवं उदारमना दानदाताओं से सभा का निवेदन है कि गौओं को उत्तम चारा मिले इसके लिए जो भी सज्जन चारा दान देना चाहें, उनका स्वागत है। यदि आप दूरस्थ प्रदेश के हैं तो कृपया चारे हेतु अनुमानित राशि सभा को ड्राफ्ट/चेक/नगद भेज सकते हैं। यशस्वी दानदाताओं के नाम परोपकारी पत्रिका में प्रकाशित किए जाएंगे। आपका दान गौवों के संवर्धन में सहायक होगा।

ऋषि उद्यान में संचालित गौशाला के दानदाता

(१ से १५ जनवरी २०१५ तक)

१. श्री देवमुनि, अजमेर २. श्री गिरीश कुमार शर्मा, मेरठ, उ.प्र. ३. श्री ओंकारसिंह आर्य, मेरठ, उ.प्र. ४. श्री मोतीलाल, शान्ति देवी शर्मा, जयपुर, राज. ५. श्री कैलाशचन्द्र शर्मा, अजमरे ६. श्री रमेशमुनि, अजमेर ७. डॉ. स्वतन्त्रानन्द शास्त्री, रोहतक, हरियाणा ८. श्रीमती शशिकान्ता/जगदीशचन्द्र थामन, बड़ोदरा, गुजरात ९. श्री रिषभ गुप्ता, अम्बाला केन्ट, हरियाणा १०. श्री उमेश चन्द त्यागी, अजमेर ११. श्रीमती स्नेहलता अग्रवाल, जयपुर, राज. १२. श्री प्रतीश कालीरमन, हिसार, हरियाणा १३. श्रीमती नारायणी देवी आर्या, गुडगाँव, हरि. १४. श्री वीरेन्द्र भार्गव, जैसलमेर, राज. १५. श्री वीरसेन शास्त्री, झुंझुनु, राज. १६. श्रीमती प्रेमलता शर्मा, अजमेर १७. श्री रविकान्त शर्मा, अजमेर १८. श्रीमती मनोज देवी, अजमेर १९. श्री मयंक, अजमेर २०. श्रीमती रतन देवी, अजमेर २१. श्री अशोक कुमार मंगल, अजमेर २२. श्री दीपक सिंह, अजमेर २३. सेन्चुरी प्रा. लि., किशनगढ, राज. २४. श्रीमती सुशीला शर्मा, अजमेर, २५. श्री मदनगिरी/एस.पी. शर्मा, अजमेर २६. श्री विजयसिंह गहलोत, अजमेर २७. श्री अमित जाटव, अजमेर २८. श्री पियू बारेठ, अजमेर २९. श्री गोवर्धनप्रसाद खण्डेलवाल, अजमेर ३०. श्री सुरेश खण्डेलवाल, अजमेर ३१. श्री महेश खण्डेलवाल, अजमेर ३२. श्री सीताराम खण्डेलवाल, अजमेर ३३. श्री कैलाशसिंह गुप्ता, अजमेर ३४. श्री गिरधरगोपाल भण्डारी, अजमेर ३५. श्रीमती तरुणा गहलोत, अजमेर ३६. श्रीमती लक्ष्मी देवी कटारिया, अजमेर ३७. श्रीमती राजकुमारी कटारिया, अजमेर ३८. श्री रमेशचन्द शर्मा, अजमेर।

– परोपकारिणी सभा, अजमेर।

स्तुता मया वरदा वेदमाता-३

संसार में सुख पाने के लिए उसकी बाधाओं का निराकरण करना आवश्यक है। सुख के बाधक कारण ही दु:ख का आधार हैं। पतञ्जलि ऋषि ने संसार में क्लेशों की चर्चा करते हुए पाँच प्रकार के क्लेशों का उल्लेख किया। उनको हम अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष, अभिनिवेश नाम से जानते हैं। यथार्थ में देखा जाए तो अविद्या, अस्मिता, अभिनिवेश, इन तीन में अविद्या कारण है और अस्मिता एवं अभिनिवेश उसके कार्य हैं। इनको समझने और दूर करने के लिए ऊँचे स्तर की बौद्धिकता की आवश्यकता है, मानसिक स्तर पर दो ही क्लेश बचते हैं, एक राग और दूसरा द्वेष। सारा संसार प्रतिदिन दो दु:खों में ही घूमता रहता है, किसी से राग है तो वह मनुष्य के दु:ख कारण है, यदि द्वेष है तो वह भी मनुष्य के दु:ख का कारण है। राग जनित दु:ख मोह के कारण मनुष्य अनुभव करता है।

मन्त्र में अविद्वेष कहने से दु :ख के कारण का निवारण हो जाता है। ये दोनों ही राग द्वेष की प्रवृत्तियाँ जीव में शरीर के साथ बनी रहती हैं। इनके रहते दु:ख भी बना रहता है। मनुष्य संसार के व्यवहार में राग-द्वेष से जुड़ा रहता है। उसे इसे दूर करने के लिए नित्य निरन्तर प्रयत्न करना होता है। द्वेष या राग उत्पन्न ही न हो यह तो योगियों के लिए सम्भव है, सामान्य मनुष्य के अन्दर तो राग द्वेष पानी में तरंगों की तरह उठते ही रहते हैं। इनका निवारण समाधान करने से होता है। ऐसी परिस्थिति में ऐसा हो सकता है। जिससे राग द्वेष के प्रभाव से बचा जा सकता है। इसका उपाय है द्वेष उत्पन्न होने पर उसपर विचार किया जाय और होने वाले प्रभाव को रोका जाय। जैसे किसी के कुछ बोलने से, कुछ अनुचित करने से, मनुष्य के मन में द्वेष उत्पन्न होता है तब सामान्य व्यक्ति उसकी प्रतिक्रिया व्यक्त करता है या तो उस से विवाद कर सकता है, उससे दूरी बना सकता है, उससे बातचीत बन्द कर सकता है। इसमें अधिक सहज है, ऐसे व्यक्ति से विवाद हो जाता है तो हो जाने दे। विवाद होना स्वाभाविक है। हम विवाद करके भी किसी से बोलचाल बन्द कर देते हैं या बिना विवाद के भी ऐसा कर सकते हैं। इसमें अच्छी परिस्थिति है, विवाद हो जाने देना। विवाद के समय एक ही बात हमें लाभ पहुँचा सकती है कि विवाद में ऐसे शब्दों या बातों का उपयोग न हो। जिनको लेकर बाद में पश्चाताप करना पड़े। दूसरी बात है हम विवाद के बिना भी बोलना बन्द करते हैं और विवाद के बाद भी बातचीत बन्द कर देते हैं। ये दोनों ही परिस्थितियाँ उचित नहीं कही जा सकती। विवाद के पश्चात् भी संवाद को बनाये रखा जा सकता है, यदि हम संवाद को बनाये रखने में सफल हो जाते हैं तो हम द्वेष के दुष्परिणाम से अपने को बचा सकते हैं। यह तो सम्भव नहीं है किसी को क्रोध आये नहीं, किसी से असहमति बने नहीं, ऐसी दशा में जो भी प्रतिक्रिया सहज हो तो उसके करने में अधिक हानि नहीं होती अपितु विवाद के बाद का संवाद हमारे सम्बन्धों को अधिक मधुर और सुदृढ़ बना सकता है। विवाद के बाद होने वाला संवाद हमारे सहन करने के सामर्थ्य को बढ़ा देता है।

ऐसी द्वेष की परिस्थिति से बचने का एक सहज उपाय हो सकता है जब किसी के साथ आप प्रतिक्रिया व्यक्त करने जा रहे हों तब एक क्षण रुक कर यह सोच लें, जो उत्तर आप देने जा रहे हैं क्या यह उत्तर उचित है, दूसरी बात यह कि क्या उत्तर अभी देना ठीक है या फिर किसी अवसर के लिए रख लिया जा सकता है। यदि इतना विचार एक क्षण के लिये भी हमारे मन में आ जाता है तो उत्पन्न होने वाले द्वेषभाव से बचा जा सकता है। प्रचार कार्य करते हुए एक घर में पारिवारिक विवादों को या क्रोध की परिस्थितियों को कैसे दूर किया जा सकता है उस विषय में एक बहन ने अपना अनुभव बताया, कहने लगी जब मुझे किसी बात पर क्रोध आता है और मैं ऊँचे स्वर में बोलती हूँ तो मेरे पति घर से बाहर निकल जाते हैं और जबतक टहल कर आते हैं मेरा क्रोध शान्त हो जाता है। इसके विपरीत जब मेरे पति को क्रोध आता है वे जोर से कुछ बोलते हैं तो मैं अपने कमरे में टी.वी. का स्वर ऊँचा कर देती हूँ जिससे मुझे कुछ भी सुनाई नहीं देता कि वे क्या कह रहे हैं। कुछ समय बाद सब कुछ सामान्य हो जाता है। किसी के आवेश के सम्मुख यदि तत्काल प्रतिक्रिया से बचा जा सकता है तो विवाद के होने की सम्भावना समाप्त हो सकती है। इस प्रकार हम अपने को अविद्वेषम् बना सकते हैं।

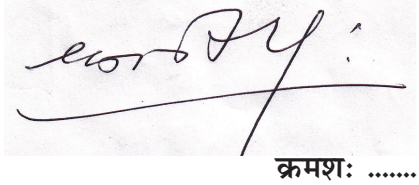

क्रमशः .....

संस्था - समाचार

१ से १५ जनवरी २०१५

(१) यज्ञ एवं प्रवचन - परमपिता परमेश्वर की कृपा से, सभा कार्यकर्ताओं के पुरुषार्थ से व आप सभी के सहयोग से पिछले दिनों भी सभा की सभी गतिविधियाँ यथा प्रातः सायं यज्ञ, प्रवचन, गुरुकुल, अतिथियों आश्रमवासियों के लिए भोजन, गौशाला, चिकित्सालय, परोपकारी पत्रिका व अन्य ग्रन्थों का प्रकाशन, जनसम्पर्क व प्रचार कार्यक्रम यथावत चलती रही।

प्रातः कालीन प्रवचन के क्रम में **डॉ. धर्मवीर जी** ने श्रद्धा सूक्त (ऋ. १०/१५१) की व्याख्या प्रस्तुत की।

श्रद्धा शब्द की व्याख्या करते हुए आपने बताया कि वस्तुतः सत्य को धारण करना ही श्रद्धा है। लेकिन आज समाज में इस श्रद्धा शब्द का बहुत अधिक दुरुपयोग हो रहा है। धर्म के नाम पर अन्धविश्वास, पाखण्ड, कुरीतियाँ आदि चलाए जाते हैं। जब इस पर प्रश्न किया जाता है तो उत्तर आता है- जी अपनी-अपनी श्रद्धा की बात है जो जैसी श्रद्धा कर लें। इस अन्ध श्रद्धा को सही ठहराने के लिए प्रायः कहा जाता है-

गुरौ देवे दैवज्ञे यज्ञकर्मणि, यादृशी भावना यस्य सिद्धिर्भवति तादृशी।

अर्थात् गुरु, देवता, ज्योतिषी और यज्ञकर्म में जिसकी जैसी भावना होती है तदनुरूप ही उसको फल मिलता है। यहाँ यदि इनसे पूछा जाए कि भाई मनुष्य जीवन की अन्तिम चीज/लक्ष्य के विषय में मानने से काम चल जाता है तो उससे पहले की चीजों/लक्ष्यों में यह युक्ति क्यों लागू नहीं होती? अर्थात् क्या कोई पत्थर की गाय बनाकर उससे चेतन गाय की तरह कार्य ले सकता है या किसी व्यक्ति का पुत्र खो जाए तो घर में पुत्र की मूर्ति बनाकर अपना काम निर्विघ्नता से चलाया जा सकता है। सेठ अपनी मूर्ति बनाकर दुकान में रख दे और सारा लेन-देन ठीक तरह से होने की कल्पना कर सकता है? तो इसका उत्तर है- नहीं। जब ऐसा नहीं किया जा सकता है तो क्यों ईश्वर के विषय में हम इस युक्ति को अपनाते हैं। वस्तुतः पदार्थ के सत्यस्वरूप के अनुसार ही कार्य बनते और बिगड़ते हैं केवल मानने से कुछ नहीं होता। इस क्रम में प्रतिदिन इस सूक्त के ऋषि, देवता के स्मरणपूर्वक इसका प्रतिदिन पाठ किया जाता है। इसके मन्त्र इस प्रकार हैं-

श्रद्धायाग्निः समिध्यते श्रद्धया हूयते हविः।
श्रद्धां भगस्य मूर्धनि वचसा वेदयामसि।।१।।
प्रियं श्रद्धे ददतः प्रियं श्रद्धे दिदासतः।
प्रियं भोजेषु यज्वस्विदं म उदितं कृधि।।२।।
यथा देवा असुरेषु श्रद्धामुग्रेषु चक्रिरे।
एवं भोजेषु यज्वस्वस्माकमुदितं कृधि।।३।।
श्रद्धां देवा यजमाना वायुगोपा उपासते।
श्रद्धां हृदय्ययाकूत्या श्रद्धया विन्दते वसु।।४।।
श्रद्धां प्रातर्हवामहे श्रद्धां मध्यन्दिनं परि।
श्रद्धां सूर्यस्य निम्रुचि श्रद्धे श्रद्धापयेह नः।।५।।

पुनः इसकी व्याख्या में आपने बताया कि मानव में जो मौलिक चीज है वो उसकी इच्छा है। आधुनिक मनोविज्ञान की भाषा में इसे संवेग कहा जाता है। संस्कृत काव्य शास्त्रों में इनकी विस्तृत चर्चा है। वहाँ रति, हास, शोक, भय, क्रोध, उत्साह, जिगुप्सा, विस्मय और निर्वेद को मानव मन का स्थाई भाव (सदैव चित्त में किसी न किसी रूप में रहने वाला) माना गया है। इन भावों से ही क्रमशः शृंगार, हास्य, करुण, विभत्स, रौद्र, वीर, घृणा....., और शान्ति आदि रस की अनुभूति होती है। रति भाव जब छोटो के प्रति होता है तो वह वात्सल्य कहलाता है, समान अवस्था वालो के प्रति होता है तो मित्रता कहलाता है, बड़ों के प्रति होता है तो आदर कहलाता है, सम-विषय के प्रति होता है तो प्रेम कहलाता है और जब यही भाव देवताओं के प्रति होता है तो श्रद्धा कहलाता है।

गीता के सत्रहवें अध्याय में भी श्रद्धा की चर्चा की गई है। वहाँ इसे तीन प्रकार की बताया गया है- सात्त्विकी, राजसी और तामसी-

त्रिविधा भवति श्रद्धा देहिनां सा स्वभावजा।
सात्त्विकी राजसी चैव तामसी चेति तां शृणु।।

-गीता १७/०२

जिस व्यक्ति का जैसा मन, चित्त, चित्त के संस्कार है, उसके अनुसार उसकी श्रद्धा का निर्माण होता है-

सत्त्वानुरूपा सर्वस्य श्रद्धा भवति भारत।
श्रद्धामयोऽयं पुरुषो यो यच्छ्रद्धः स एव सः।।

-गीता १७/०३

सात्त्विकी, राजसी और तामसी श्रद्धा की व्याख्या में आगे चौथे श्लोक में कहा गया-

यजन्ते सात्त्विका देवान्यक्षरक्षांसि राजसाः।

प्रेतान्भूतगणांश्चान्ये यजन्ते तामसा जनाः।।

–गीता १७/०४

अर्थात् सात्त्विक वृत्ति वाले परोपकार, सर्वकल्याण की भावना की पूर्त्ति के लिए देवताओं की पूजा करते हैं और राजसिक व तामसिक लोग परपीड़ा (मारण, मोहन, उच्चाटन, वशीकरण आदि) के लिए प्रयास करते हैं। (यहाँ यह ध्यान रखना चाहिए कि मारण, मोहन आदि तन्त्र-मन्त्र आदि के माध्यम से नहीं किया जा सकता, लेकिन इन दुर्जनों का परपीड़ार्थ संकल्प उनसे ऐसा करवाता रहता है।)

अपने प्रवचन क्रम में **स्वामी ध्रुवदेव जी** ने ईश्वर, जीव, प्रकृति आदि आध्यात्मिक विषयों पर अपने विचार रखें। ईश्वर आदि है या अनादि? इस प्रश्न का समाधान करते हुए आपने बताया कि पहले हमें आदि और अनादि शब्दों के अर्थों पर विचार करना चाहिए। आदि शब्द के अनेक अर्थ होते हैं जैसे- आरम्भ, कारण आदि। तो प्रश्न हुआ कि ईश्वर आरम्भ वाला है या कारण वाला है या बिना आरम्भ वाला है या बिना कारण वाला है? तो निश्चित रूप से इसका उत्तर होगा कि ईश्वर बिना आरम्भ वाला और बिना कारण वाला है। क्योंकि यजुर्वेद के ४० वें अध्याय के ७वें मन्त्र-

स पर्य्यगाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविरं शुद्धमपापविद्धम्।
कविर्मनीषी परिभूः स्वयम्भूर्याथातथ्यतोऽर्थान्
व्यदधाच्छाश्वतीभ्यः समाभ्यः।।

जैसे अनेकों वेदमन्त्रों में परमेश्वर को स्वयम्भू कहा गया है। स्वयम्भू आदि विशेषण बताते हैं कि ईश्वर सनातन है, स्वयं सिद्ध है उसका कोई कारण नहीं है और ईश्वर का कोई प्रारम्भ नहीं है क्योंकि उसे- **'सत्यं ज्ञानं अनन्तं ब्रह्म'** जैसे स्थलों में 'अनन्त' कहा है और अनन्त केवल वही पदार्थ हो सकता है जिसका कोई आदि नहीं होता। प्रत्येक आदि पदार्थ, सान्त ही होता है। पुनः 'अनादि' की और व्याख्या करते हुए आपने बताया कि कोई भी पदार्थ दो प्रकार से अनादि हो सकते हैं- एक प्रवाह से अनादि और दूसरा स्वरूप से अनादि। तो जिसका कारण होता है वह प्रवाह से अनादि होते हैं और जिसका कारण नहीं होता वह पदार्थ स्वरूप से अनादि होता है। अथवा दूसरे शब्दों में जो द्रव्य, गुण और कर्म, संयोग से उत्पन्न होते हैं वे प्रवाह से अनादि होते हैं और जो द्रव्य, गुण और कर्म नित्य है, हमेशा रहते हैं वे स्वरूप से अनादि होते हैं। तो ईश्वर प्रवाह से अनादि है या स्वरूप से अनादि है? तो इस प्रश्न का उत्तर होगा कि ईश्वर स्वरूप से अनादि है अर्थात् ईश्वर का स्वरूप एक जैसा रहता है, बदलता नहीं है और ईश्वर पैदा नहीं होता है, मरता भी नहीं है। ऐसे द्रव्य, गुण व कर्म जो संयोग से उत्पन्न होते हैं प्रवाह से अनादि कहलाते हैं जैसे समस्त कार्यपदार्थ (महतत्त्व से लेकर लोक-लोकान्तर पर्यन्त) प्रवाह से अनादि है। लौकिक उदाहरण के रूप में बरसाती नदी का दृष्टान्त ले सकते हैं। जब वर्षा होती है तो वह बहने लगती है, फिर ग्रीष्म आने पर सूख जाती है, पुनः वर्षा में बहने लगती है और पुनः सूख जाती है। ये संयोग से उत्पन्न होने वाले द्रव्यों के उदाहरण हैं। संयोग से उत्पन्न होने वाले गुण की व्याख्या में आपने बताया कि जैसे अविद्या। जीवों में उत्पन्न होने वाली अविद्या और विद्या दोनों ही प्रवाह से अनादि हैं। इसके विपरीत ईश्वर की विद्या स्वरूप से अनादि है। तो इस प्रकार से सृष्टि, अविद्या आदि गुण, जीवों के कर्म प्रवाह से अनादि हैं अर्थात् कभी अस्तित्व में आते हैं कभी अस्तित्व में नहीं रहते। पुनः प्रश्नोत्तर शैली के अपने व्याख्यान में आपने प्रश्न किया कि - ईश्वर क्या चाहता है? तो उत्तर आया कि- ईश्वर सबकी भलाई चाहता है, सबके लिए सुख चाहता है। पुनः प्रश्न उत्पन्न हुआ कि ये किस प्रमाण से पता चला कि ईश्वर सबकी भलाई चाहता है सबके लिए सुख चाहता है? इस प्रश्न के उत्तर में आपने बताया कि परमेश्वर के अनेक नाम हैं, उन नामों में कुछ नाम गौणिक (गुणों के आधार पर) हैं, कुछ नाम कार्मिक हैं, कुछ नाम स्वाभाविक हैं और एक नाम निज प्रधान (ओ३म्) है। तो इन नामों में माता, पिता व मित्र भी उस परमेश्वर के नाम हैं। महर्षि दयानन्द सत्यार्थप्रकाश के प्रथम समुल्लास में इन नामों की व्याख्या करते हैं कि जैसे माता-पिता अपनी सन्तान की सदा उन्नति चाहते हैं, बढ़ोत्तरी चाहते हैं, सुख चाहते हैं वैसे ही परमेश्वर भी हमारा भला चाहता है, हमारे लिए सुख चाहता है, ये तो नामों के आधार पर सिद्ध हुआ। दूसरा पक्ष है कि धर्म से सुख होता है, उन्नति होती है और अधर्म से दुःख होता है, अवनति होती है। परमेश्वर ने वेदों में जीवों के लिए धर्म व अधर्म को समझाया और उसे धर्म ही का आचरण करने की आज्ञा दी/विधान किया। इस आदेश से भी सिद्ध होता है कि ईश्वर हमारे लिए सुख चाहता है।

जैसा कि विदित है कि समय-समय पर ऋषि उद्यान में वैदिक विद्वान्, समाजसेवी तथा शिक्षाविद् आदि पधारते रहते हैं, पिछले दिनों जालन्धर (पंजाब) से श्री सुनिल विज तथा श्रीमती रश्मि विज पधारें। श्री विज जी का

सम्बन्ध आर्यसमाज के महान् बलिदानी स्वामी श्रद्धानन्द जी के परिवार से है। श्रीमती रश्मि जी जालन्धर जिले के सुप्रसिद्ध विद्यालय **पुलिस डी.ए.वी.** का संचालन करती हैं। आपने अपने विद्यालय संचालन के अनुभव सुनाए। आपने बताया कि कैसे कुछ बच्चों को लेकर शुरू की गई संस्था आज जालन्धर जिले की सर्वोत्कृष्ट संस्था बन गई है। आपके विद्यालय के छात्र लगभग प्रतिवर्ष अपने विज्ञान प्रारूप (Science Model) को लेकर अमेरिकी संस्था नासा की विद्यालयी प्रतियोगिता में न सिर्फ सम्मिलित होते हैं अपितु विश्वभर के बच्चों के मध्य प्रथम, द्वितीय व तृतीय आदि स्थानों के पुरस्कार भी जीतकर लाते हैं। शैक्षणिक पाठ्यक्रम के साथ-साथ आप छात्रों को सांस्कृतिक-धार्मिक शिक्षा देना भी जरूरी समझती हैं, इसलिए और गतिविधियों के साथ-साथ आपके यहाँ छात्रों को यज्ञ, ध्यान आदि का भी प्रशिक्षण दिया जाता है। छात्रों को ठीक शिक्षा मिल सके इसलिए आप अध्यापकों को भी समय-समय पर प्रशिक्षित करवाती रहती हैं। आपके यहाँ बच्चों को प्रायोगिक शिक्षा के साथ-साथ संगीत, नृत्य, भाषण, चित्रकारी, मूर्त्तिकला और प्राय: हर तरह के खेलों का प्रशिक्षण भी दिया जाता है। आपके विद्यालय की विशेषता यह है कि आपके यहाँ काफी संख्या में योग्य निर्धन छात्रों को भी प्रवेश और उन्हें सारी सुविधाएँ नि:शुल्क प्रदान की जाती हैं जो धनाढ्य परिवार से आने वाले विद्यालय के अन्य विद्यार्थी को प्राप्त होती हैं। एक छोटे से स्तर से शुरू करकर इतने बड़े स्तर तक सफलता प्राप्त करने के पीछे आप परोपकार व ईश्वर समर्पण की भावना को प्रमुख मानती है। हर बच्चे को अच्छी शिक्षा मिलें इस प्रयास में मार्ग में आने वाली हर छोटी-बड़ी बाधाओं को आपने कुशलतापूर्वक दूर किया है। आपका मानना है कि यदि **'हमारा इरादा नेक है तो सारी दुनिया उस इरादे को पूरा करने में लग जाती है।'**

२. प्रचार कार्यक्रम- आचार्य सोमदेव जी, आचार्य कर्मवीर जी, आचार्य वेदनिष्ठ जी व आचार्य ज्ञानचन्द्र जी का ७ जनवरी से १२ जनवरी २०१५ तक नागौर, जोधपुर, बाड़मेर, जैसलमेर, रामगढ़, फलौदी, भादरिया आदि स्थानों में प्रचार कार्यक्रम रहा। इस कार्यक्रम में जनसम्पर्क के साथ-साथ समय-समय पर विद्यालयों में छात्रों को मार्गदर्शन प्रदान कर चरित्र निर्माण की शिक्षा प्रदान की गई। अपने उद्बोधन में आचार्य कर्मवीर जी ने छात्रों को विद्यार्थी काल की महत्ता बताई। आपने बताया कि यह मानव तन का मिलना अत्यन्त दुर्लभ अवसर है और इस दुर्लभ अवसर में विद्यार्थीकाल अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है क्योंकि इसी समय व्यक्ति के जीवन की नींव तैयार होती है। इस काल में अर्जित की गई शिक्षा, विद्या, शारीरिक सौष्ठव जीवन पर्यन्त काम आती है। इस काल का समुचित प्रयोग हो सके अत: हमारे ऋषियों ने विद्यार्थी के लिए ब्रह्मचर्य जैसे व्रतों का विधान किया है। ब्रह्मचर्य से जहाँ शरीर पुष्ट होता है वहीं व्यक्ति के अन्त:करण व उसका आत्मा भी सामर्थ्यवान होते हैं।

आचार्य सोमदेव जी ने अपने उद्बोधन में 'सत्यमेव जयते' के माध्यम से विद्यार्थियों में सत्य की निष्ठा जगाई। आपने विद्यार्थी से प्रश्न किया कि यहाँ तो कहा जा रहा है कि सत्य ही जीतता है, आप लोगों को क्या लगता है- सत्य जीतता है या असत्य जीतता है? इस पर विद्यार्थियों का स्वाभाविक उत्तर आना था कि सत्य ही जीतता है। पुन: आपने एक दृष्टान्त सुनाया- एक शिक्षक अपने विद्यार्थियों को गृहकार्य देता है। सभी विद्यार्थी इस कार्य को करके लाते हैं एक विद्यार्थी करके नहीं लाता। शिक्षक जब उस विद्यार्थी से गृहकार्य करके न लाने का कारण पूछते हैं तो दिन भर खेल में व्यस्त रहने वाला वह विद्यार्थी झूठ कहता है कि- जी कल मेरे पिता जी मुझ से दिनभर कार्य करवाते रहे। शिक्षक उसकी बात पर विश्वास करके उसे दण्ड नहीं देते हैं। इस उदाहरण को रखकर आपने पुन: विद्यार्थियों से प्रश्न किया- बच्चो! कौन जीतता है सत्य या असत्य? विद्यार्थी अब असमंजस की स्थिति में थे, उन्हें समझ में नहीं आ रहा था, कुछ ने कहा- हाँ, असत्य जीतता है तो कुछ ने कहा सत्य जीतता है। पुन: आचार्य जी ने इसका समाधान करते हुए बताया कि बच्चों सदैव सत्य की ही विजय होती है। कभी-कभी हमें असत्य जीतता हुआ प्रतीत होता है। लेकिन अन्तत: जीत तो सत्य की होती है। अपने अध्यापक से झूठ बोलकर बचने वाला विद्यार्थी कितनी बार झूठ बोलकर बच सकता है, दो बार, तीन बार, पाँच बार, दस बार। चलो यदि वह दस बार बच भी गया तो परीक्षा के समय क्या करेगा और जब परीक्षा परिणाम आएगा, तो जहाँ और विद्यार्थी अपनी मेहनत के परिणाम से आनन्दित होंगे वहीं इस विद्यार्थी का परिणाम क्या होगा, निश्चित तौर पर ऐसा विद्यार्थी असफल ही होगा। तो बच्चों सत्य की ही जीत होती है। अत: बच्चों अपने जीवन में सत्य के साथ कभी भी समझौता नहीं करना। इति।।

आर्यजगत् के समाचार

१. वार्षिकोत्सव- गुरुकुल हरिपुर, जुनवानी, पो. गोड़फूला, जि. नुआपड़ा, ओडिशा का पंचम चतुर्वेद पारायण महायज्ञ एवं वार्षिक महोत्सव ३० जनवरी से १ फरवरी २०१५ को देश के शीर्षस्थ विद्वानों, साधु-सन्तों, सद्गृहस्थियों, आर्यजनों तथा समाज को नेतृत्व प्रदान करने वाले नेतागणों की पावन उपस्थिति में अनेक महत्त्वपूर्ण, प्रेरक एवं ऐतिहासिक कार्यक्रमों के साथ सम्पन्न होने जा रहा है। इस त्रिदिवसीय महोत्सव पर 'वेद स्वाध्याय ही क्यों? वेद स्वाध्याय का उपाय', 'मनुष्य जीवन का दरिद्रता, उसके निराकरण के उपाय' इत्यादि विषयों पर विद्वज्जनों का सारगर्भित उपदेश होगा तथा गुरुकुल में अध्ययनरत ब्रह्मचारियों का बौद्धिक व शारीरिक प्रतिभा प्रदर्शन होगा। अत: आप सभी गुरुकुल प्रेमी महानुभावों से अनुरोध है कि इन तिथियों में सपरिवार इष्टमित्रों सहित पधारकर हमें उत्साहित करें। सम्पर्क-०९४३७१८८३२१

वैवाहिक

२. वर चाहिये- आर्यसमाज परिवार व प्रतिष्ठित व्यवसायी परिवार की सुन्दर, संस्कारित पुत्री जन्म अक्टूबर १९९१, कद-५ फीट ३ इंच, वर्ण-गौरवर्ण, शिक्षा-बी.टेक, एम.बी.ए., निवासी राजस्थान के लिए आर्यसमाजी परिवार का वर चाहिए।-**सम्पर्क-०७०२३८५६६११**

ई-मेल - ndhswa@gmail.com

३. वधू चाहिये- आर्यवन, रोजड़ और ऋषि उद्यान, अजमेर से जुड़े हुए युवक चिन्तन रामी, उम्र ३० साल, कद-५.९ फीट, वर्ण-गेहुंआँ, शिक्षा-एम.बी.ए., व्यापार-प्रॉपर्टी लेन-देन, निवास-जजेज बंगलो रोड, अहमदाबाद-३८००१५ (गुज.) के लिए आर्यसमाजी परिवार की, अध्यात्म में रुचि रखने वाली, वैदिक सिद्धान्तों के अनुसार जीवन जीने की इच्छुक, घरेलू कन्या चाहिए।-**सम्पर्क-०९८२४९०८०८५**

ईमेल-chintan_success1@yahoo.co.in

शोक समाचार

४. श्री नवीन मिश्र, आर्यसमाज अजमेर की माता जी श्रीमती रामवती मिश्रा का देहावसान दि. १६ दिसम्बर २०१४ को हो गया। परमपिता परमेश्वर से प्रार्थना है कि उनकी आत्मा को सद्गति प्रदान करे। नगर आर्यसमाज, परोपकारिणी सभा इस दु:खद घड़ी में आपके साथ है।

५. श्रीमती अनिला देवी आर्या पंचवटी, नासिक, महा. का देहान्त १८ नवम्बर २०१४ को ९४ वर्ष की आयु में हो गया। आपने अपने पति स्व. श्री ज्ञानेन्द्र आर्य के साथ हैदराबाद संग्राम में बढ़चढ़ कर हिस्सा लिया था। आपने आर्यसमाज का प्रचार पूरे भारत वर्ष में किया।

६. श्रीमती कैलाश रानी कपूर का देहान्त १९ दिसम्बर २०१४ को ८४ वर्ष की आयु में प्रात: ४ बजे हुआ। उन्होंने अपने पति स्व. भगवन्तसिंह कपूर के साथ मिलकर पूरे नासिक जिले में तथा पूरे महाराष्ट्र में आर्यसमाज का प्रचार किया। वे कुशल भजन लेखिका एवं गायिका थीं।

७. श्रीमती शशि कपूर का देहान्त १९ दिसम्बर को प्रात: ९ बजे पूना में हो गया। वे आर्यसमाज पंचवटी के संस्थापक सदस्यों में से एक थीं। उन्होंने अपने स्व. पति श्री वीरेन्द्र कपूर के साथ आर्यसमाज पंचवटी के कार्यों में बढ़चढ़ कर हिस्सा लिया। वे एक अच्छी भजन गायिका भी थीं।

८. ब्र. राजसिंह आर्य का निधन- आर्यजगत् के महान् वक्ता एवं युवा नेता तथा दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के पूर्व प्रधान ब्र. राजसिंह आर्य के निधन का समाचार सुनकर पूरा आर्यजगत् स्तब्ध रह गया। ब्र. राजसिंह का निधन सोमवार को हृदयगति रुकने के कारण राममनोहर लोहिया अस्पताल में दोपहर लगभग १२.३० बजे हो गया।

आचार्य राजसिंह उच्च्कोटि के कुशल वक्ता के रूप में अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर जाने जाते थे। आपकी यज्ञ करवाने की पद्धति से हजारों लोगों ने अपनाकर दैनिक यज्ञ करने के संकल्प लेते रहे हैं। आपने आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली के प्रधान पद को सुशोभित करते हुए आर्यसमाज के प्रचार-प्रसार के लिए अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों को देश और विदेशों में आयोजित किये और स्वामी दयानन्द के सन्देश को जन-जन तक पहुँचाया।

आचार्य जी युवा संगठन सार्वदेशिक आर्यवीर दल के सर्वमान्य नेता रहे। आपके कुशल नेतृत्त्व में दिल्ली में आयोजित अन्तर्राष्ट्रीय आर्य वीर महासम्मेलन आर्यसमाज के इतिहास में नई कड़ी जोड़ गये। आप युवकों के प्रेरणास्रोत थे। आपने अनेक आर्य वीर प्रशिक्षण शिविर लगाकर युवाशक्ति को आर्यसमाज से जोड़ा। आपके निधन से आर्यजगत् को जो क्षति हुई उसे भरना अति कठिन होगा।

परोपकारी परिवार की ओर से हार्दिक श्रद्धाञ्जलि।